

रमेशकुमार त्रिपाठी

समीक्षार्थ

प्रकाशक
शशि प्रकाशन
५ नन्द नगर
बी एच यू
वाराणसी-५

प्रथम सस्करण १९९८

मूल्य ७० रुपये

मुद्रक
डिवाइन प्रिण्टर्स
बी १३/४४ सोनारपुरा
वाराणसी

MERE DWAR TARU NEEM KA
Poems by Ramesh Kumar Tripathi

जीवनसगिनी

शशि के लिए

क्रम

हे पीले हरे
कुछ नग्न हो गये
तुम क्षीन वसन मे,
पर नगे होकर
दिखते हो सुन्दर ।
देख रहा हूँ मै
तुम्हारी तमाम मजबूत बाँहे,
हो बडे सुदृढ,
अपना तन सुदृढ
छिपा रखा था पहले
सघन वसन मे तुमने ।
अहो । इसे अब
मै देख पाया हूँ ।
हो उदास क्यो ?
वियुक्त स्वजनो का
शोक है क्या ?
शेष आत्मीयो के जाने का
भय है क्या ?
बताऊँ तुम्हे –
तुमसे ही जन्मेगे
सत्वर, नव स्वजन,
मधुर, मादक फूल
और फल,
फिर भर जाओगे
निज नव पर्णो से ।
और बताऊँ तुम्हे—
उदास हो, वीरान हो
फिर भी आकर्षक हो
दृढ वदन तुम ।
विचित्र वर्ण तुम ।

हरी भूमि

बहुत बार
गुजरा हूँ
इस खेत के बगल से,
हर बार
इसकी हरीतिमा ने
मेरी ऑखो को
बरबस खीचा है,
देखता रह गया हूँ
बॅधा-ठगा
घनी गहरी हरियाली को,
सम्मोहक, जीवन्त
हमेशा पाया है
इस रूप-राशि को
जो बिछी हुई है
इस लघु भू-खण्ड पर ।

महुए ।

महुए ।
मधुमास मे
लगते हो कैसे ।
कुछ पत्ते तुमसे
विलग हो गये,
बाकी साथी तुम्हारे

हे पीले हरे,
कुछ नग्न हो गये
तुम क्षीन वसन मे,
पर नगे होकर
दिखते हो सुन्दर ।
देख रहा हूँ मै
तुम्हारी तमाम मजबूत बाँहे,
हो बडे सुदृढ,
अपना तन सुदृढ
छिपा रखा था पहले
सघन वसन मे तुमने ।
अहो । इसे अब
मै देख पाया हूँ ।
हो उदास क्यो ?
वियुक्त स्वजनो का
शोक है क्या ?
शेष आत्मीयो के जाने का
भय है क्या ?
बताऊँ तुम्हे –
तुमसे ही जन्मेगे
सत्वर, नव स्वजन,
मधुर, मादक फूल
और फल,
फिर भर जाओगे
निज नव पर्णो से ।
और बताऊँ तुम्हे—
उदास हो, वीरान हो
फिर भी आकर्षक हो
दृढ वदन तुम ।
विचित्र वर्ण तुम ।

पेड पाकड के ।

पेड पाकड के ।
हो बहुत विशाल ।
ताजे, हरे
तुम्हारे पत्ते
न जाने कितने
मृदुल, मनोहर ।
लम्बी, मोटी बॉहो पर
लिपटाये तुमने
सॉप बहुत ।
तोते आते,
तुममे पाते
अपना घर,
हो जो तुम
उन जैसे ।
सौन्दर्य तुम्हारा
वैभव सारा
मै देख रहा हूॅ
भूल-भाल सब ।

मेरे द्वार तरु नीम का

विशाल तरु नीम का
मेरे द्वार की है शोभा,
मेरे द्वार पर शामियाना ।
डाले लम्बी, मोटी इसकी
दूसरे घरो तक है फैली ।
इसकी शीतल छाया तले
देवी के चबूतरे पर

कुएँ की जगत पर
लोग आये हे
बैठते, बतियात ।
उत्सव कितने मोहल्ले के,
पचायते कितनी गॉव की
हुई प्रागण मे इसके ।
गर्मी की रातो मे
कतिपय स्वजन मेरे
लेटते, सोते तरुवर तले ।
दिन मे बैठते, लेटते,
काम करते
इसके तले ।

लेटकर पेड नीचे
देखी है मैने
बेर-बेर, देर-देर
लम्बी, पतली, हरी, पीली
तमाम लघु पत्तियॉ ।
वृक्ष की विशालता पर,
डालो, टहनियो की
शक्ल-सूरत पर
हुआ हूँ विस्मित
बहुत बार ।
इसके साथ मेरी
जुडी भावनाये कितनी ।
बचपन मे, नीचे इसके
बहुत खेल खेले है ।
इतना यह परिचित
लगता है जीवित ।
गर्मी की बहुत राते
शीतल की है इसने ।

ताका हे, झॉका हे
शशि को बार-बार
इसके झरोखो से ।

वसन्त जब-जब आया हे,
उजडा, नगा इस पाया हे,
देखी है तब-तब भरपूर
डाले, टहनियॉ अनगिन
देखे है तब दूरस्थ भवन
पहले थे ओट मे जो ।
इसके पीत वर्णो की दरी
दिन-दिन द्वार बिछी है,
इनका सुबह-शाम
होलिका-दहन हुआ है,
सुवासित मन हुआ है,
वक्ष स्वच्छ हुआ है ।

वसन्त मे ही देखा है
नया श्रृगार इसका ।
निकले किसलय नये,
ताजे, कोमल, चिकने ।
धीरे-धीरे भर गया,
विशाल वृक्ष सज गया,
सुआपखी पर्णो से ।

असख्य लघु पुष्पो के
फूलने और फलने से
महक उठा द्वार मेरा,
चहक उठा मन मेरा ।
फल फूट-फूट पडे
हरे, छोटे, अण्डे-से ।
फिर लघु गल्ले

पीले, रसीले, पके
चुए इसके ।
बटोरे है गल्ले,
खेल उनसे खेले है ।
इसकी सूखी सीको से
दॉत साफ किये है,
कान खुजलाये है
मीठे-मीठे सिहरकर ।

अपने पुरातन की कभी
शाखा को कटा देख,
दिल मे दर्द हुआ है ।
द्वार की शान
इसे समझा मैने ।

इस प्राचीन पादप के
कुछ ही पहले से
होता है इतिहास शुरू
मेरे विप्र-वश का,
छोटे-से गॉव मे ।
सग-सग पुरखे के
बीत गयी पॉच पीढियॉ ।
मेरे पुरखे
पले-बढे
तरुवर के ऑगन मे ।
फिर यही से उन्होने
शुरू की आखिरी
गगा-यात्रा अपनी ।
साथ निभायेगा क्या अन्त तक
अति प्रिय सखा यह
मेरे वशधरो का
वर्तमान ग्राम मे ?

भटकटैया के फूल

भटकटैया के प्यारे फूल
पीले-पीले
कॉटो मे खिलते ।
कॉटे
पत्ते-पत्ते मिलते ।
खिलते है ये
सुमन सुनहरे
ऐसी-वैसी जगहो मे ।
इसीलिए क्या
नही देखते
लोग इन्हे,
नही सजाते
गुलदानो मे
लोग इन्हे ।

हे नीम ।

हे नीम ।
वसन्त अन्त मे
नूतन, हरा
परिधान पहने
गुच्छ-गुच्छ
लघु-पुष्पाभरण से
सज रहे हो ।
तव शीतल साया तले
हम बैठते ।
निशा मे नीचे तुम्हारे

हम लेटते ।
भर देता
मन हमारा
भीनी गन्ध से
तन तुम्हारा ।
हे शीतल, सुगन्धित, रूप-धन्य ग्राम-भूषण ।
हम तुम्हारा
नमन करते ।

गन्धराज

सूँघता हूँ
तुमको
बार-बार ।
फिर भी
भरता नही मन,
सुरभि-धन
मेरे गन्धराज ।

चूमता हूँ
तुमको
बार-बार ।
प्यासे होठो को
देते तृप्ति
शीतल, सुकोमल
प्रिय गन्धराज ।

देखता हूँ
तुमको
धवल, विशाल

बार-बार
प्रिय-लोचन
मनोरम गन्धराज ।

दो फूल

सुबह-सुबह
करते भ्रमण
चला आ रहा
दो फूल लिये ।
एक हाथ मे
बेला है,
दूसरे मे
है गन्धराज ।
सूँघूँ मै
कभी इसे,
सूँघूँ मै
कभी उसे ।
जिस पल
जिसको सूँघूँ,
उस पल
उसका ही
हो जाऊँ ।
प्रमुदित मन
स्मित आनन
मै देख रहा हूँ
सारी दुनियाँ,
न जाने जो
मेरी खुशियाँ ।

सुमन का सदुपयोग ।

सुन्दर सुमन सुकोमल
लेते है लोग तोड
चढाने को देवता पर ।
न उसे देखते
जी भर,
न सूँघते
सोरभ उसका,
क्योकि डरते हे
उसके दूषित हो जाने को ।
उन्हे है सन्तोष
अर्पित करने से
पूत पुष्प
इष्ट देव को ।
यह है सदुपयोग
दीन सुमन का,
न हो पाया भोग
जिसके रूप, रग, गन्ध का ।

केले का पत्ता

हवा है
बह रही,
बूँदे है
पड रही,
दोपहर श्याम
हो गयी है ।
सामने एक

पत्ता बडा
हरा-भरा
केले का
खुलता-ढपता
धीरे-धीरे
बार-बार ।
इस तरह,
लग रहा वो
हमे अच्छा,
तरुणी के
घूँघट-सा ।

खिले फूल सरसो के

खेत-खेत मे
दूर-दूर तक
खिले फूल
सरसो के ।
छोटे-छोटे
पीले-पीले
गुच्छो मे
खिले फूल
सरसो के ।
देख इन्हे
ऑखे बॅध जाती,
तृप्ति न होती
देख इन्हे ।
हरी धरती ने
पीली चादर ओढी

हाथ धोकर
खाने बैठ गया
खुले नीले आसमान के नीचे,
महुवे के विशाल दरख्त के नीचे
जिस पर चिडियाँ चहचहा रही थी,
थोडी दूर पर जानवर चर रहे थे,
सामने एक कुत्ता बैठा था ।
मजदूर कुदरत के बीच
पशु-पक्षियो के पडोस मे
धूप-हवा से घिरा
अपनी मेहनत का
अपने श्रम से बनाया
साधारण किन्तु सुस्वादु भोजन
निश्चिन्त, प्रसन्न, सन्तुष्ट मन से
कर रहा था ।
उसे भूख खूब लगी थी ।
धीरे-धीरे चाव से उसने
गरमागरम रोटियाँ
जायकेदार सोधे भुरते से
डटकर खायी ।
उस गरीब ने
कुत्ते को कुछ देने का
ध्यान रक्खा,
क्योकि वह भी उसी की तरह
भूखा था,
भूख की पीडा वह समझता था ।
कुत्ता
उसे खाते बराबर देख रहा था,
मजदूर याचना की कशिश समझता था ।
भोजन कर चुकने पर

जीवन कठोर है

जीवन कठोर है,
इसे जीना ही होगा ।
झूठे मीठे सपने
मत पालो,
इनसे मन को
मत बहलाओ,
यह असलियत से
मुँह मोडना है,
यह मन की
छलना है ।
असल मे, यह सब
काम नही आता ।
जीवन तो कठोर है,
जीना इसे होगा ही ।

मुकद्दर का सिकन्दर

खूबसूरत बीवी
पढी-लिखी
सुविधा की
नौकरी वाली
मिली है तुम्हे ।
तुम खुद
तरक्की की सीढियॉ
चढते जा रहे हो
बिना उनके
काबिल हुए ।

अदा की है ।
मैने
अपना स्वाभिमान
बेचा है,
अपनी इज्जत
गॅवायी है,
मै
अपनी ही नजरो मे
आदमीयत से
गिरा हूॅ ।

स्वार्थ और रिश्ते

हमारा उनसे मतलब है
इसलिए अकसर हमको
उनका खयाल आता है ।
लगता है वो
हमे बुला रहे है,
या बुलायेगे ।
उनके क्षेत्र से गुजरते
खोजती है उनको
हमारी नजरे ।
मतलब ने
उनको
हमारे लिए महत्त्वपूर्ण
बना दिया है ।
सोचो, स्वार्थ से
कितना प्रेरित होते है
हमारे रिश्ते ।

वसन्त मे नीम

वसन्त मे नीम
बडा अच्छा लगता है ।
पीली, पकी पत्तियॉ
बीच-बीच मे
कुछ हरी पत्तियॉ
विभूषित करती है
वीतरागी होते
जनक को अपने ।
हल्की पीली पत्तियॉ
पेड से चूकर
हवा मे लहराती बलखाती
धरती पर गिरती है
पूरीकर अपनी जीवन-लीला ।
निष्प्राण पर सुन्दर पत्तियॉ
इगित करती है
प्रकृति का अटल नियम—
मृत्यु जीवन की परिणति है ।
वृक्ष के नीचे
बिछ जाता है
इन पत्तियो का
सुनहरा, कुरकुरा गलीचा
कुचले, बटोरे,
जलाये जाने के लिए ।
जब जलती हे ये पत्तियॉ,
भर देती है
वायुमण्डल को
कीटनाशिनी, रोगहारिणी
पावन, मनभावन सुगन्ध से ।

मरकर भी
ये हमे देती है
लाभ अनेक ।

मै चाहता हूँ घूमना

मै चाहता हूँ घूमना
उन वीथियो मे
जिन्हे किये है आच्छादित
सुवासिनी मजरियो से मण्डित
मनोरम वृक्ष आमो के ।

मै चाहता हूँ टहलना
उन मार्गो मे
किनारे जिनके
फूलते-फलते है
मादक पेड महुओ के ।

मै चाहता हूँ जाना
उन राहो मे
मिले जहाँ
पुष्पित और सुरभित
मोहक द्रुम नीमो के ।

करौदो के फूल

गरमी की एक शाम
बह रही थी मस्त हवा ।
रास्ते के किनारे

थी लम्बी, घनी कतार
करौंदो के झाडो की
खिले थे जिनमे
खूब-खूब फूल
लघु श्वेत खूब।
ठण्डी हवा
हो गयी थी और खुशनुमा
दूर तक,
नखत-से उन फूलो की
गम्भीर सुगन्ध से।

खत का इन्तजार

रोज-रोज
खत का
इन्तजार करते है
भरने को खालीपन
सूने मन का।
खत जब पाते है,
भरती नही रिक्तता
मन की।
असन्तुष्ट पहले-से,
कल के खत का
इन्तजार करते हैं।
भ्रम का यह सिलसिला
चलता ही रहता है,
रोज-रोज
अपने से
हम ठगे जाते है।

प्रकृति-मित्र के सग

कमरे मे काम करते
श्रान्त-क्लान्त
हो गये हो ।
चलो ।
बाहर चलो ।।
खुले आकाश तले
ठण्डी, ताजी हवा से
लिपटे चलो ।
पेड-पौधो,
लता-कुजो,
फल-फूलो,
पशु-पक्षियो,
का आनन्द
लेते चलो ।
प्रफुल्ल हो लो,
स्फूर्ति भर लो,
प्रकृति-मित्र के तुम
सग रहकर ।

बेला के फूल

मेरी खिडकी के उस पार
बेला के खूबसूरत, खुशबूदार
फूल खिले है ।
मै अकसर सुबह
खिडकी मे से निहारता हूँ
उन प्रिय पुष्पो को ।

इस ऋतु मे अभी तक
मै एक बार भी
इन धरती के तारो को
गरमी की हिम-मूर्तियो को
प्यार नही कर पाया ।
बहुत चाहता हूँ
एक झटके मे वहाॅं पहुँचकर
एक फूल तोडूॅं,
उसे देखूॅं-छूऊॅं,
और खूब सूॅंघूॅं ।
लेकिन, आह !
मै यह कर नही सकता,
क्योकि दूसरे की बगिया के
फूल है वे ।

चौदवी का चाॅंद

चौदवी का
मोहक चाॅंद
खिला है ।
जी भर इसे
अभी देख लो ।
पूनम के चाॅंद के लिए
इसे मत टालो —
अभी नभ
निर्मल है,
क्या मालूम
कल बादल
छा जाये,

या मन तुम्हारा
अच्छा न रहे,
या तुम्ही
न रहो,
या कुछ और
हो जाये ।

जीवन-दर्शन

कुछ भी न पकडो
कुछ भी न बॉधो
सब बह रहा है
थमेगा न कुछ भी ।
हर चीज देखो
हर चीज छोडो
सब कुछ तुम्हारा
न कुछ भी तुम्हारा ।
पल-पल जिओ
पल-पल मरो
हर क्षण जीवन
हर क्षण मरण ।
सरिता है जीवन
सरिता बनो,
सुषमा मिलेगी ।
हर वस्तु नश्वर
हर वस्तु नूतन
नश्वर बनो,
नवीनता मिलेगी ।
टूटेगा बन्धन
स्वतन्त्रता मिलेगी ।

मत जोड़ो विशेषण

अपनी किताब के
समर्पण-पृष्ठ पर
लिखा नाम माँ का ।
बहुत है ।
मत जोड़ो विशेषण
इस नाम के आगे ।
होती नही जरूरत
कुछ नामो को
विशेषणो की,
बल्कि विशेषण
कर देते है कम
उनकी गुरुता ।
भाव वजन जब
शब्द अल्प तब ।

बबूल

बबूल यह
है कँटीला,
पर लघुकाय पत्तो से
है सजीला,
लघु, गोल, रेशेदार,
पीत पुष्पो से
है रँगीला ।
परिन्दे
इसकी श्री-वृद्धि करते
आकर
इस पर जो बैठते ।

उन्होंने हमे कुछ दिया

वे हमे कुछ है देते
हमको खुशी है,
त्याग देना है उनका
हमको बढकर खुशी है ।

प्रेम से, सद्भाव से
उन्होने हमे कुछ दिया,
दिल मे हमारे
जल उठा जगमग दिया ।

जरूरते काटकर
उन्होने पैसा इकट्ठा किया,
फिर हमे दे दिया,
बस दिल मे गये वे ।

उन्होने हमे कुछ दिया,
लेकिन नीयत उनकी बुरी थी,
इस तरह का उपहार पाकर
हमको न अच्छा लगा ।

प्राचीन सुहृद्

तुम्हारे-मेरे बीच
कभी थी प्रगाढ मैत्री ।
फिर कुछ कारणो से
हुआ मनमुटाव ।
बाद मे,
तुम दूर जा बसे ।
इस बीच कुछ काम
पडा तुम्हारा,

मैने कुछ ढिलाई, लापरवाही
इस काम मे
बरती जरूर,
मनमुटाव कुछ कारण रहा था,
कुछ, मेरा स्वभाव ।
तुम भी तो
बडे बेसब्र थे
अपने काज मे ।
मेरी गलती को
बडा बुरा माना तुमने ।
वर्ष बीतते गये,
मिले एक-दो बार बस
हम दोनो,
लेकिन रही न बात पुरानी ।
वर्ष भर मे
हम पा जाते
एक-दूसरे के
दो-एक खत ।
इस तरह,
भूलते गये हम,
दूर होते गये हम,
ज्यादा तुम,
मै कम ।
मैने अपनी सीमा मे
अकसर की कोशिश
तुमको कुछ देने की,
लेकिन, तुम अपनी सीमा मे
औरो को ही रहे देते ।
जब हम थे दोस्त,
तुमने मुसीबत मे

मेरा साथ दिया था,
यह अहसास
हमेशा रहा है मुझको,
इसलिए, बावजूद
तुम्हारी बडी उपेक्षा के,
याद तुम्हारी आती रही,
कुछ कर सकने की तुम्हारे लिए
चाह बराबर होती रही ।
अभी जल्दी
तुम्हारा पत्र आया
तुम्हारी खुशियो की खबर लेकर ।
तुमने मुझे
बडी जल्दी
खबर दी थी ।
मै खुश हुआ,
कुछ जला भी ।
दूसरे की खुशी
जलाती है ही ।
बेशक, मै खुश हुआ,
दिखी खुशी की रोशनी
उस दिन ।
कुछ खुशियाँ रोशनी होती है ।
तुम्हारे उन्नयन की
रोशन खुशी मे
मिला था
कुछ स्वार्थ मेरा—
तुमसे कुछ पाने की आशा ।
कुछ दिन बाद,
एक ने बताया—
उसे देने वाले हो

बहुत कुछ तुम
अपनी प्रोन्नति से ।
मुझे धक्का लगा,
उससे जला,
तुम पर क्रोध आया,
तुमसे घृणा हुई,
मै दु खी हो गया ।
अब मै समझता हूँ,
दोहरी खुशी पाकर
तुम्हारा प्राचीन प्रेम
जग उठा था,
और, उस उद्रेक मे
लिख गये थे
वह खत तुम,
क्षणिक था वह भाव ।
पुराना प्रेम जगता है,
पर होता है क्षणिक,
टिकते है
अनुवर्ती तनाव, मनमुटाव,
जिनसे मुख्यत
निर्धारित होते है कार्य ।
इसके अलावा,
दूसरे के लिए
कोई जो करता है
वह मुख्यत इस विचार से
कि उसने उसके लिए
क्या किया है, क्या कर सकेगा ।
लेन-देन
बहुत कुछ
गणना का मामला है ।

मेरे प्राचीन सुहृद् !
तुमसे बार-बार
भरमा हूँ मै ।

छिपकली का दुस्साहस

तुमने खोली अपनी अलमारी,
निकाली उससे एक पोथी,
वहॉ से खिसकी छिपी छिपकली ।
बडा गुस्सा आया तुमको,
यहॉ भी जमाया इसने डेरा ।
तुम्हारी उम्दा अलमारी के अन्दर
प्रिय पुस्तको के पीछे
आ बसा निकृष्ट जीव ।
इसने दुस्साहस किया अतिक्रमण का
इस सुरक्षित, स्वच्छ कक्ष के ।
ऐसी जगह जतन से दे पाये थे
तुम अपनी किताबो को ।
इसके लिए इतनी दुनिया पड़ी है,
फिर, यहॉ क्यो आ मरी, हरामजादी !
महल मे सजायी
तुमने किताबे अपनी ।

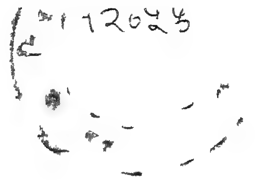
क्या करे छिपकली
जब जॅच गयी उसे अलमारी
सुरक्षित, एकान्त, तात ।
तुमने अपना तो सोचा,
उसका कुछ भी न सोचा,
सोचो जरा,

जिसने तुमको बनाया
उसी ने उसको बनाया,
तुम-वो दोनो
हो सन्तान
एक ही परम पिता की ।
फिर हो भाई कैसे ।
बेजान किताबे रह सकती वहाँ
मुद्दत तक, शौक से,
है जो वे तुम्हारी,
जान-सी है प्यारी ।
छिपकली निखिद्दी,
बेकार, परायी ।

पपीते ।

पपीते ।
कट गया तू ।।
अब कैसे देखूँ
हरा परिधान तेरा,
फूल-फल तेरे ।
अनेक खग खूबसूरत
आते थे खाने
तेरे फल
पके, मीठे ।
उन्हे खाते
देखता था मैं
खुशी से ।
तूने उन्हे
कभी टोका नही ।

आजाद वे
खाते थे जी भर
फल जन्मे तेरी कोख से ।



ग्राम-तरुणी

ग्राम-तरुणी
आज निकली
दुर्गा-पूजा मे
नगर देखने
चल रही चमकती
इधर-उधर देखती
रह-रहकर
पीछे भी मुडती
चरण चचल
नयन चचल
क्षण-क्षण
हाथ चचल
सारी हटाते
ठीक करते
घूँघट उसका
उठ चुका
देखने हर चीज
कभी-कभी
घूँघट काढती है
लिहाज है
अपने बडो का
सग जिनके
उड़ रही है

हल्की-फुल्की
अलबेली कल्लो
सुबह-सुबह
नव प्रयाण से
प्राणो भरी है ।

माला और नन्दी

गेदा की मोटी पीली माला
सगमरमर के नन्दी बैल के
गले मे पडी है ।
यह सुन्दर पुष्पहार
व्यर्थ है उसके लिए ।
शायद कुछ दर्शक खुश होते हो ।
क्या पहनाने वाला
पहनाते समय खुश हुआ था ?
या स्वार्थ और अज्ञानवश
पहनायी उसने उसे माला ?

यह पुष्पहार
बालक को पहनाया जाता
तो खुशी से फूला न समाता,
पहनाने वाला खुश होता,
देखने वाले खुश होते ।
या यह माला
किसी सुन्दरी को पहनायी जाती
तो वो खुश होती,
ज्यादा अच्छी लगती,
द्विगुणित सुन्दरता उसकी
खुशी की रोशनी फैलाती ।

इसलिए भी क्या ?

वे किताबे
जुटाते जाते है ।
है पढने का
उन्हे शौक ।
पढते है,
लेकिन,
बहुत नही पढ पाते ।
पढने की उनकी चाह
अतृप्त बनी रहती है ।
कुछ मजबूरी
परिस्थितियो की है,
कुछ दिमाग मे कमी है ।
इसलिए भी क्या
वे पुस्तके
जुटाते रहते हैं
कि कुछ प्यास बुझे
पढने की
उनकी ?

पूजा और प्रकृति

पीपल का पेड
पूज रही हो तुम
सुबह-सुबह
बेखबर
कि चिडियॉ
चहचहा रही है,

मीठी हवा
बह रही है,
फूल-पौधे
मुसकुरा रहे है,
और ओस से भीगी
घास ताजी है ।
मजे नही मिल पा रहे है तुम्हे
कुदरत की इन नेमतो के
तुम्हारे ही अज्ञान से ।

धार्मिकता ।

सूरज-से नियमित है
बाबा विश्वनाथ का
दर्शन करने मे,
गगा-तट पर
ध्यान साधने मे ।
लेकिन दोस्तो को
एक कप चाय
नही पिला सकते,
किसी दु खिया का
दर्द नही बॉट सकते ।
सीमित है वे
अपने तक,
अपने ईश्वर तक,
कटे हुए
उसकी ही सन्तानो से ।
देखो,
कैसा है
उनका धर्म ।

सिकन्दर महान

फिलिप के बेटे,
अरस्तू के चेले,
बुकेफेलिस के आरोही,
विश्वविजयी सिकन्दर ।
तुम महान थे,
सचमुच महान ।
इतिहास के बेजोड पुरुष ।
तुम्हारे एक कर मे कृपाण,
दूसरे मे 'इलियड' ।
तुम अद्भुत साहसी थे,
शायद तभी
यूनान मे कहावत बन गयी
'साहस सभी गुणो की मॉ है' ।
दुर्धर्ष सेनापति थे,
और जुझारू सैनिक,
युद्ध मे आगे बढ
कूद जाते थे
जब देखते डिगती हिम्मत
अपने सूरमाओ की ।
पराक्रम ऐसा
कि देश-पर-देश
जीतते चले गये ।
हिम्मत कभी न हारते,
औरो को हिम्मत बॅधाते ।
विचित्र था यह योद्धा ।
विद्या का अनुरागी था
चयनित शिक्षको से शिक्षित,
अथक ज्ञान-पिपासु,

बालवत् जिज्ञासु
नया देखने, नया सीखने को,
रणनीतिचतुर, सतत विजेता ।
तुम थे भूषित
ज्ञान-प्रभा से,
साथ मे सेना,
सग मे टोली
विज्ञ जनो की ।
इस तरह, लड़ते-चलते
ज्ञान का पान-प्रसार किया ।
कद मे थे छोटे,
फिर भी
ऊँचाई आकाश की पायी थी ।
व्यापक थी दृष्टि तुम्हारी,
बहुमुखी था व्यक्तित्व तुम्हारा,
इन्द्रधनुषी था चित्त तुम्हारा ।
आँधी-से चलते थे तुम,
मेघो-से गरजते थे तुम ।
धरती के शक्ति-नाथ ।
कितने तुम यायावर थे ।
रुकने का नाम नही,
मुडने का काम नही,
आगे बढते जाना था,
आखिर जब मुड़ना ही पडा,
हो गये थे
बडे लाचार तुम,
सेना ने न दिया साथ,
अकेले कैसे बढते तुम ।
आदमी के गुण-दोष

तुममे रचे-बसे थे,
लेकिन वे बढे-चढे थे,
अत आम आदमी से हटकर
तुम असाधारण थे ।
बडे क्रूर, बहुत दयालु,
बडे पियक्कड, महा सयमी,
क्रोधरूप, तो क्षमाशील,
कभी दैत्य, तो कभी देव ।
बहुतो का सहार किया,
कितनो को जीवन-दान दिया,
विजितो को सखा बनाया,
उनका उचित सम्मान किया ।
महल जलाये, महल बनाये,
शहर उजाडे, शहर बसाये ।
इस विलक्षण महापुरुष की
कैसी थी दिनचर्या ।
क्या खाते थे, क्या करते थे ।
क्या-क्या सोचा करते थे ।
किनसे मिलते थे, कैसे मिलते थे ।
कौन थे तुम्हारे सहचर ।
कैसे बीतता था तुम्हारा दिन ।
कैसे गुजरती थी रात ।
क्षण-क्षण स्पन्दन,
क्षण-क्षण जीवन ।
बत्तीस वर्ष के अल्प जीवन के
पल क्रियावान, विचारवान ।
गुजरे साल हजारो
तुमको गुजरे,
लेकिन गुजरे नही
तुम्हारे क्रिया-कलाप ।

रोमांचित हो उठते है
हम तुमको पढ-सुन ।
देवोपम ।
तुमको प्रणाम ।

महुए के फूल

महुए के ताजे,
सफेद, रसीले,
किंचित् पीताभ
फूल देखे सुबह
जमीन पर पड़े ।
एक को उठाया,
इच्छानुसार सूँघा,
क्षण भर को
उसकी मादक सुगन्ध
बन गयी
मेरा अस्तित्व ।
फिर दूसरा चखा,
ठण्ढा, मीठा, ताजा
रस उसका
लगा अच्छा ।

कुदरत की ये
साधारण सौगाते
भर जाती है
हमारी झोली
अमोल खुशियो से ।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के बसन्ती दिन

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के
बसन्ती दिन ।
घूमने निकले सुबह
मन खोले, शिर उठाये
सतर्क इन्द्रियो के सग ।
मन्द शीतल पवन
छू-छू, करेगा सचारित
प्राणो मे नव जीवन ।
महुवे बिछे
कही मिलेगे,
दो-एक उठाये,
सूँघे, छुएँ, चखे,
देखे महुवे की
सजी वीरानगी ।
आमो को देखे,
कम होने लगे है बौर,
फलने लगे है टिकोरे,
अति मनोहर है
इनके पर्ण
नाना रगो के ।
देखे विशाल पीपल,
हो गये है कुछ नगे,
नये रूप मे
हो गये है भव्य,
किसी-किसी मे
निकल आये है
ललछौहे किसलय,
किसी-किसी मे

वे बदल गये है
चमकीले, चिकने, सुवापखी
कोमल पत्तो मे ।
कही दिख जायेगी
जामुनो की कतारे
गछी हरे पत्तो से ।
कही ऊँचे सागौनो की कतारे,
विशाल, पके पत्ते इनके
गिरने लगे है,
यहाँ-वहाँ
सूखे, कुरकुरे पत्ते
बिछे मिलेगे
विशाल शय्या-से
बिखेरते विलक्षण छटा ।
कही करेगे स्वागत
बेला के नये फूल
बने धरती के तारे ।
आये, घूमे
बेला की वीथियो मे,
देखे कलि-पुज,
देखे पुष्पित पुष्प,
देखे सघन पर्णावलि,
डूबे नेत्र
हरे सागर मे,
सुरभित सुमन हैं,
इन्हे सूँघे, इन्हे सूँघे ।
अब भी
पुराने फूल
खिलते मिलेगे
गुलाब, गेदा आदि के ।

बेले छायी दिखेगी
घरो, पेडो पर
पुष्प-भूषित,
अनेक रगो के,
लाल रगो के,
गहरे लाल,
तमाम फूल
आकृष्ट करेगे ।
कही पके खेत
सरसो, गेहूँ के,
कही हरे खेत,
आ जायेगे
दृष्टि-पथ मे ।
सुनेगे कलरव
पक्षियो का,
कुहू-कुहू
कोकिल की,
मधुर गर्जन
मयूर का ।
वसन्त वसुन्धरा के
रग, गन्ध, आकार, दशा के
दिखाता अनेक रूप,
वसन्त यथार्थ के,
जीवन-मरण,
विकास-ह्रास,
परिवर्तन-प्रवाह,
विषाद-हर्ष के,
खोलता अनेक रूप ।

पीपल के पत्ते

बीत रहा वसन्त ।
भर गये है
पीपल, पत्तो से
कोमल, ताजे,
सुवापखी, चमकीले ।
हवा से ये
रह-रह हिलते हैं ।
पर्ण-विभूषित तरु
अति सुन्दर लगते हैं ।
हर दिन देखते है
पत्तो की यह निधि,
फिर भी नही अघाते हैं ।
चिर मोहिनी
होती है सुन्दरता ।

अक्षय जीवन

तुम मुझे
बार-बार
काटते हो,
मैं
बार-बार
उगती-बढती हूँ,
और अपने
विविध सौन्दर्य से
सहृदय लोगो का
मन मोहती हूँ ।

तुम मुझे
क्या नष्ट कर सकते हो ?
मै तो
अक्षय जीवन की
मलिका हूँ ।

जीवन के दो रूप

एक पैर का युवक
बैसाखी के सहारे
चला आ रहा था
सुबह-सुबह ।
उसे देख,
मुझे डर लगा,
दु ख हुआ ।

दूसरी ओर
ओस-भीगी हरी घास
के मैदान मे
खुशनुमा हवा मे लिपटे बच्चे
हँसते खेल रहे थे फुटबाल ।
यह देख,
मुझे अच्छा लगा,
खुश हुआ ।

जीवन के ये रूप
कितने जुदा,
जो पल भर मे
ले गये मन को
कहाँ से कहाँ ।

विचित्र बात

आज आदमी को
फुरसत नही है
कि वह
खुले आकाश के नीचे
खुली हवा मे
पेड-पौधो और घास के बीच
पशु-पक्षियो के सग
बैठ सके
कुछ देर
शान्त मन ।
विचित्र बात यह है
कि उसकी काफी व्यस्तता
फालतू कामो मे है
जो बनाते है
उसे रोगी ।

दूर से

देखने मे वह
अति साधारण लगता था,
इसलिए बहुत दिनो तक
उपेक्षित रहा ।
सम्पर्क जब उससे हुआ,
तब पता चला
अनेक गुण हैं उसमे ।
बदल गया नजरिया
मेरा उसके प्रति ।

अब वह मुझे
अच्छा लगता है ।

अनगिन लोग
दूर से
रह जाते है मामूली
हमारे लिए ।

सम्बन्ध

आदमी देखने से
बहुत थोडा मालूम होता है ।
सलाप से, साथ से
ज्यादा मालूम होता है,
तब उसके अच्छे-बुरे
अनेक रूप खुलते है,
तब उसके प्रति
हमारे विविध भाव बनते हैं ।
देखने मे जो
साधारण लगते है,
सम्पर्क से उनमे
सुहाने गुण मिल सकते है,
और, असाधारण जो दिखते हैं,
सम्बन्ध से उनके
घिनौने अवगुण दिख सकते हैं ।

अक्षय, चिर नवीन सौन्दर्य

एक आदमी
तालाब मे खिले

सुन्दर लाल कमल
देख रहा था,
देखता जा रहा था,
और चाहता था
पी जाना उनका सौन्दर्य
एक बार मे ।
कमल बोले-
तुम यह
नही कर सकते,
हमारा सौन्दर्य
अक्षय, चिर नवीन है ।

पुराना जमाना

जब हम
पुराने जमाने के
भाव, विचार
किताबो मे पढते है,
तो अच्छा लगता है,
उन्हे जीने की
इच्छा भी होती है ।
लेकिन,
हमारा जमाना
इतना बदला है
पुराने जमाने से
कि पिछले भावो, विचारो की
सच्चाई, गहराई
हम अच्छी तरह
समझ नही पाते,

और,
कितना कठिन हो गया है
अब उनको जीना ।

नगरवासी का अनुभव

ग्रामीण क्षेत्र मे
भ्रमण करता
एक नगरवासी
देखता है पलग
पडा खुली जगह ।
देखता है वह –
खुला, फैला,
नीला आकाश,
स्वच्छन्द विचरते विहग,
खुली, जीवनदायिनी हवा,
सुनहरी, आरोग्यकारिणी, प्राणवर्धिनी धूप ।
उसे होता है अनुभव-
यहॉ पलग पर लेटकर
स्वस्थ, प्रसन्न मन
कर सकता है वह
उन्मुक्त विचरण ।

करौंदे

वह अकसर गुजरता है
करौदो के झाडो की बगल से ।
हर बार देखता रह जाता है

हरे छोटे, घने पत्तो वाले
ग्हस्य-भरे, अभेद्य झाडो को,
जिनमे खिले रहते है
लघु, खडिया-से, तारो-से फूल,
जिनमे विराजमान रहते है
लाल चमकीले, बहुत छोटे, अण्डो-से,
तमाम खट्टे फल,
ओर जिनकी कग्ती है श्री-वृद्धि
ललछोंही, कोमल कोपले ।

ये झाड
है सुख के स्रोत
इस पथिक के ।

अन्तर्द्वन्द्व

यह भवन नवीन
है मनभावन,
यहॉ स्थान यथेच्छ,
है द्वार-ऑगन,
परिवेश अनावृत
नीरव, निर्मल,
औ' विपुल पवन ।
मगर कभी भी मुझे
करना पड सकता है
यहॉ से निर्गमन ।
अत नही यह मुझे
पाता बॉध,
यहॉ मैं रस
ले पाता नही,

अब भी यह
लगता मुझे अपरिचित ।
यहाँ रहने का मै
नही असली अधिकारी ।
यह बात सताती मुझको
असुरक्षा, अनीति, आशका से,
और मै करता हूँ महसूस
अपने को अलग तथा अपमानित ।

पण्डित जी

थे एक पण्डित जी
सात्विक विचार के ।
धर्म और नैतिकता मे,
ऊँचे साहित्य मे,
थी उनकी अभिरुचि ।
धर्म था उनका व्यवसाय,
उससे वह
अपने को,
छोटे कुटुम्ब को,
थे पालते ।
धर्म-ग्रन्थो का पारायण
करते रहते थे,
उन्हे सुनाते रहते थे ।
कुछ ग्रन्थो को
पढते बार-बार,
रुचि से ही
पढते हर बार,
दूसरो को सुनाते

बडे चाव से,
तब देखते ही बनती थी
उनकी मुख-मुद्रा ।

दीवाली के दो रूप

वह भी
एक दीवाली थी
जब दीपो मे
फूट पडी थी
खुशी अयोध्या की
अपने राम के
पुनरागमन पर,
जिन्होने बिताये थे
पितृ-वचनार्थ
चतुर्दश वर्ष
वन मे
और किया था वध
आततायी, महाबली दशानन का ।
कैसी रही होगी
वह उल्लास-दीपमालिका ।

तब से
मना रहे है
यह त्योहार
रस्म के तौर ।
काल और परिस्थितियाॅ कर देती है
शिथिल, विकृत
पर्वोत्सव की मूल भावना ।

आज भी जलते है दीप,
लेकिन,
कौन कहे घी के,
शुद्ध सरसो के तेल के भी नही,
चलानी तेल के ।
वह भी, थोडा-थोडा डाल
छोटे-छोटे दीयो मे
जलाते है लोग ।
अमावस की काली रात मे
देख ये टिमटिमाते दीये
हम कुछ खुश हो जाते है,
विरासत की थाती
सॅभाले जो है,
तमस दूर करने का
यह नया तरीका जो है ।

अन्तर है
उस-इस दीवाली मे,
उपवन मे मुसकाते गुलाब
और कमरे के
कागजी गुलाब मे ।
प्रज्ज्वलित हो उठी थी तब
झूम-झूम खुशियॉ,
जगमगा उठी थी
राम की नगरी
उल्लास-सरोवर मे ।
अब दे देते है
कुछ खुशी दीये
और
मिठाई, पटाखे, नव वसन, द्यूत-क्रीड़ा ।

आजन्म कारावास

वेदना के
क्षण घनेरे
क्या करूँ
अब आस टूटी
आगे अँधेरा ही अँधेरा
सपनो की दुनिया से निकाला
मै यहाँ
सडता रहा हूँ
मै यहाँ
सडता रहूँगा
हाय, यह
किस पाप का
आजन्म कारावास है ।

बादल

काले बादल, गोरे बादल
भूरे बादल, नारगी बादल
गुलाबी बादल, सुनहरे बादल
भारी बादल, हलके बादल
आसमान मे ठहरे बादल
भगते बादल, सरकते बादल
गगन के नीले ऑगन मे
खेलते और थिरकते बादल
नाना प्रकार की आकृतियाँ
आसमान मे धरते बादल
रग बदलते, रूप बदलते

कभी नही थकते है बादल
कभी चमकते, कभी गरजते
बहुत बरसते है ये बादल
अन्न उगाते, फूल खिलाते
हरा-भरा जग करते बादल
मतवाली नदियो के विधाता
बाढ की लीला लाते बादल
कभी व्योम को ढक लेते है
दिन को शाम बनाते बादल
रात मे चॉद-सितारे छिपते
निशा भयानक करते बादल
लुका-छिपी की मोहक क्रीडा
कभी चन्द्र सग खेलते बादल
कभी डराते, कभी भगाते
कभी बुलाते है ये बादल
उल्लासपूर्ण मन करने वाले
विषाद भी मन मे भरते बादल
खुशी और आशा के वाहक
कभी तोडते मन को बादल
प्रेमीजन दीवाने जिनके
कवि-कृषको को वे प्यारे बादल
वसुन्धरा से दूर बसे ये
है बच्चो के आकर्षण बादल
देखूॅ बहुत, बहुत मै देखूॅ
मेहमान बने ये चचल बादल ।

सौदेबाजी

गुरु ने कहा
कमाऊ शिष्य से -

बनो जीवन-सदस्य
मेरी पत्रिका के ।
शिष्य ने सोचा,
होगे मुनाफे दो-
मिलेगी पत्रिकाये,
भले ही चन्द दिन,
बडा मुनाफा तो यह-
जॉचने को मिलेगी
उत्तर-पुस्तिकाये,
होगे सौ के हजार ।
फिर मन मे खटकी
गुरु की सौदेबाजी,
यह बात भी खटकी,
गुरु पायेगा पैसा
हडपेगा जिसका हिस्सा ।

जाति, तुम, हम

तुम सजातीय हो,
प्रतिभा, परिश्रम से उठते हो
तो हमे खुशी होगी ।
यह उचित है,
क्योकि हमारे मन की
यह स्वाभाविक उपज होगी
जिसमे अन्तर्निहित है
सदियो का सस्कार,
बात यह भी है
कि तुम्हारी उपलब्धि से
हमारा सजातीय मन

हो जायेगा कुछ अमीर ।
लेकिन, यह मत समझो
प्रतिभा, परिश्रम के
खोखले दिखावे के
हम होगे तुम्हारे सहायक ।
यह अनुचित है,
क्योकि विवेक कहता है
यह बेईमानी होगी ।

वाह रे जमाना !

वाह रे जमाना !
मूर्ख बने ज्ञानी,
जिन्हे पूजता जमाना ।
बैठे है वे
सर पे बुद्धिमानो के ।
मूर्ख है तो क्या,
पद-प्रभुता तो है पास उनके ।
मिले उन्हे चीजे,
फिर भी भरे न पेट उनके,
रात-दिन चक्कर मे
कि मिले अधिकाधिक ।
घाघ नम्बरी है ये ।
सही हो गलत,
गलत हो सही ।
इनके कुराज मे
बॅट रही रेवडियॉ
जितना जो ले सके
सो ले ।

हे असीम करुणा के पात्र ।
अब तो तुम्हे
अपनी ही शक्ति से
जीना और बढना है ।

असीम वेदना

हे शिशु ।
तुम्हारी माँ
जूझ रही थी मौत से
अस्पताल मे ।
उसकी इच्छा थी
बेहद इच्छा थी
तुम्हे देखने की,
जैसे होती है
इच्छा पानी की
दम तोडते घायल की ।
लेकिन तुम उसे
दिखाये नही गये
कई कारणो से ।
कितनी वेदना मे
गिनी होगी उसने
अपनी आखिरी साँसे ।
इसे तुम जब समझोगे
कुछ बडा होने पर,
अपनी माँ की असीम वेदना से
काँप-काँप उठोगे ।

रातरानी

निरभ्र, निर्मल
नभ मे
पूर्ण, शुभ्र,
प्रिय-चन्द्र-बसेरा ।

मेरे ऑगन मे
रातरानी मे
विहसित पुष्पो के गुच्छो का
भव्य बसेरा ।

धवल चन्द्रिका मे नहा रहे
सुरभित सुमनो को
रह-रहकर मै
सूँघ रहा हूँ ।

थमे पलो मे
बेखुदी मे मैं
इस वक्त
जी रहा हूँ ।

खुशियो का अन्तर

मेरे बेटे ने
चहकते हुए
अपनी माँ से कहा-
आज का दिन
मेरे लिए अच्छा है,
क्योकि
बाल कटवाये,

मल-मलकर
जी भर नहाया,
नये तोलिये से
देह पोछी ।

आह । ये चीजे
मुझे खुशी नही देती,
अच्छी नही लगती,
मेरे लिए तो
अच्छी और खुशी देने वाली चीजे है
पैसे, पद, प्रतिष्ठा, प्रसिद्धि ।

राणा प्रताप और मान सिह

राणा प्रताप ने जिया था
कष्टो का जीवन ।
पीडा, उपेक्षा, अभाव, अपमान
बहुत झेले थे ।
राजमहल छोडा,
वन मे लुक-छिपकर रहे थे,
अपने परिवार-परिजन के सग ।
सब सहते गये,
त्याग करते गये,
मातृ-भूमि की
स्वतन्त्रता के लिए,
स्वाभिमान की
रक्षा के लिए ।

प्रताप को मरे
हो गये है

सैकडो साल,
पर आज भी
हम उनको करते है याद
आदर व गर्व के साथ ।
और, उनकी गाथाये पढ-सुन
रुँध जाता है हमारा गला ।

दूसरी ओर,
मान सिह का
सुविधाओ और सुखो का
मान, पद व अधिकार का
था जीवन,
पर अपनी आजादी और स्वाभिमान की कीमत पर

उन्हे
बहादुरी के बावजूद
गद्दार की हिकारत-भरी नजर से
देखते है हम ।

सरजू

सरजू
दूर से आता था
मेरे यहाँ
काम करने ।

बोवाई के दिनो मे
जब जाडा शुरू हो जाता था
वह तडके ही आ जाता
और बिना किसी को जगाये
चुपचाप बैलो, जुआ और हल को लेकर

चला जाता खेत जोतने,
उसके आने और जाने की
आहट भर मिलती ।

शरद के भोर मे
जब हम लोग
रजाई मे अधसोये रहते
दूरी को चीरती
नीरवता को तोडती
सुनायी पडती
उसके बिरहा की
तेज, मीठी तान ।
रजाई की ऊष्मा मे
जब नीद लगभग पूरी हो चुकती
उसका तमस-भेदी स्वर
विहान का सन्देश लाता
प्राणवान, आशावान लगता ।
मै मोचता,
सोये पेडो के झुरमुट के पास
धुन्ध छाये, ओस-भीगे
ठण्ढे खुले खेत मे
प्रकृति-सुषमा के सग
दो भोले साथियो के सग
कर रहा है सृजन
श्रम-सगीत का
वह अकेला वीर ।

सम्बन्ध

वर्षो से
दोस्ती थी

उनसे मेरी ।
कल उनके घर
हो गया झगडा करारा ।
क्या पता था,
अपने ही घर
मुझसे वे लडेगे,
सदा मेमना
बने रहे जो ।
देख रौद्र रूप उनका
हो गया मै हतप्रभ ।
उन्होने
उनके पिता ने
अपमान मेरा जो किया
उसके हथौडे
दिल पर मेरे
चल रहे है
आज भी ।
अब सम्बन्ध
उनसे मेरा
हो गया है भग
हमेशा के लिए ।

पूनम का चाँद

आसमान मे चॉद
निकलता है
बार-बार,
लेकिन आश्विन मे
पूनम का चॉद

मे

निकलता है साल मे
बस एक बार,
होता है
निराला वह,
होता है
दृश्य वह
सहज, अनुपम,
हो जाती है
निमज्जित जिसमे
सम्पूर्ण चेतना ।

चीटा

अपने तन से
गिरा दिया
झटके से
चीटा एक ।
देखा उसे
घिसटते ।
मन भर आया
करुणा से,
हुई ग्लानि
किया क्यो ऐसा ।
मेरी तरह
उसे भी तो हक है
स्वस्थ जीवन का ।

आध्यात्मिक मूल्य

पद पा लेना,
प्रभुता पाना,
धन का अर्जन,
कीर्ति कमाना,
लौकिक महत्त्व की
है घटनाये ।
इनको पाकर,
नही जरूरी
शान्ति, खुशी पा लेना,
प्रेम, करुणा से जाना भीग,
मानव बन जाना,
जग मे रम जाना,
ईश्वर के करीब हो जाना,
जीवन की गुरुता-गरिमा मे
जी जाना ।

जीवन-बीमा

जीवनबीमानिगम
करता है जीवन-बीमा
आदमी का ।
यह देख
तसल्ली होती है
कि जीवन है कुछ निश्चित ।
किन्तु जब
कोई घातक दुर्घटना घटती है,
या असमय,

या अचानक,
कोई मरता है,
तो डर डसता है
कि जीवन है
बिलकुल अनिश्चित ।

आनन्द

सुख-दु ख
जीवन की
साधारण परिभाषा ।
इनसे
ऊपर उठकर
मिलता है
आनन्द,
जो
नही है सुख,
नही है दु ख,
है अमृत फल
मै-विहीन
शुद्ध चेतना का ।

अखबार

सुबह या शाम का नशा
है अखबार ।
अपनी रुचि की बाते
बडे चाव से

पढते है लोग।
सनसनीखेज समाचार
नही छोडते है लोग।
आदत है ऐसी
इस नशे की
कि जिस दिन नही मिलता
होती है बेचैनी।
फिर भी,
जिसका इन्तजार इतना,
दिन एक की
जिन्दगी उसकी।
और,
बेकद्री इतनी,
कि पढकर
डाल देते है लोग
इसे इधर-उधर,
जरूरत पडी तो
इसी पर कुछ लिख लिया,
या हिस्सा एक इसका
फाड लिया,
और काम की बात
उस पर लिख लिया,
या आया जी मे
फाड टुकडा एक
कान खुजला लिया,
या इसी पर रख
कुछ खा लिया,
आवश्यकता पडी तो
इसे नोच
पोछ लिया कोई चीज।
कहने का मतलब है–

सफेद कागज, तिनका, तश्तरी, पोछना,
और न जाने क्या-क्या
है अखबार
पढने के अलावा।
है ना कितने काम का अखबार।
लेकिन,
महॅंगाई की मार से
लोग इसकी
अब हिफाजत
कुछ करने लगे है
ताकि रद्दी मे
बेच सके इसे।

आन्तरिक सौन्दर्य

मैला-कुचैला
काला-कलूटा
बदसूरत आदमी।
उसे मैं
रोज देखता था
राह गुजरते।
उसकी मै
उपेक्षा करता था,
कभी-कभी
घृणा से
मुँह भी बिचकाता था।
एक दिन अकस्मात
उससे हुई बातचीत,
तब मैने देखा

उसका स्वच्छ, सुन्दर अन्तस ।
अब वह मुझे
अच्छा लगता है,
उसके प्रति
बदल गया है
मेरा नजरिया ।

बातूनी

शाम के धुँधलके मे
राजपथ पर
एक बकरा
और एक बकरी
अगल-बगल
चुपचाप
बिल्कुल चुपचाप
चले जा रहे थे
चलते जा रहे थे
मानो मुझसे कहते
कि तुम तो हो
बातूनी
पर बनते हो
विवेकी ।

सरसता की कुजी

सोचता मै रहा-
एक दिन

निकालकर मौका
निश्चिन्त मन से
करूँगा जी भर
तुम्हारा सोन्दर्य-दर्शन ।
यह सोचता मै रहा,
सोचता ही रहा ।

एक दिन अनायास
जब तुम मिले,
तुम्हे देखता मै रहा,
देखता ही रहा ।

जब भी
जहाँ भी
मिलो तुम
करूँ मै तुम्हारा
सौन्दर्य-दर्शन ।
सरसता की असली
कुजी यही है ।

दिल जब

उन्होने
बहुत पढा है,
बहुत लिखा है,
बहुत घूमा है,
धन-यश
कमाया है,
ऊँचा पद
पाया है ।

तमाम कोशिशे
हम करते है,
जिनसे पैदा होती है
जिन्दगी की
तमाम मुश्किले, उलझने ।

भ्रम पालकर
जिन्दगी नही जी जाती,
फिर भी,
भ्रम पालकर
हम जीते है ।

समझदारी इसमे है
कि हम हिम्मत से
जिन्दगी की कठोरता का
करे सामना,
तब जिन्दगी
सचमुच
उतनी कठोर नही लगेगी,
क्योकि तब हम
जीवन की सच्चाई को जियेगे,
सच्चाई को जीने का
होता है अपना
अद्भुत जायका,
और मन
पा जायेगा छुट्टी
भ्रम बनाने और पालने से,
तब मन
हो जायेगा
बड़ा हल्का,
और उसकी कार्य-शक्ति

हो जायेगी अद्भुत,
तब जीवन का
होगा रूप ही दूसरा,
वो जीवन होगा दिव्य ।

घूस

दे दो घूस,
हो जायेगा
काम तुम्हारा
जल्दी, आसानी से ।
नही है मतलब
सही-गलत से ।
यदि नही देते हो घूस,
पग-पग पर
अडचन आयेगी,
सही काम
कराने मे भी
कठिनाई आयेगी ।

जरा सोचो तो

जरा सोचो तो,
हम अपनी मुसीबतो
अपनी तकलीफो के लिए
भाग्य को
कितना कोसते है,
ईश्वर से

कितनी शिकायत करते है ।
यह भाग्य,
यह ईश्वर,
हमारे ही
बनाये हुए है ।
हम इन्हे बनाते है
अपनी नासमझी से,
कमजोरी से,
अकर्मण्यता से,
भूख से ।

इन्तजार

दिन, दिन
साधारण घटना का
करते इन्तजार
जाते है बीत
दिन तमाम ।
घटती है यदि घटना,
तो होती है खुशी,
उछलता है दिल बॉसो ।
घटती नही अगर घटना,
तो डूबता है दिल
दु ख के ताल मे ।
मगर दिल की यह उछल-कूद
होती है क्षणिक ।
मारके की बात तो यह है-
जीवन के
कितने अमोल पल

हो जाते है व्यर्थ
करते इन्तजार ।
ओर, विचित्र है यह बात
कि यह जानते हुए भी,
बना रहता है जीवन
इन्तजार का सिलसिला ।

दो खुशियाँ

मनचाही चीज
मिल गयी,
हुई खुशी,
पर रही क्षणिक,
फिर रीता
हो गया हृदय,
उठने लगी
दूसरी चाहे ।

किसी ने
मुझको
प्यार दिया,
हुई खुशी
अलग प्रथम से,
टिकी देर तक,
भरा हृदय,
हुई रोशनी
मन मे ।

बस चाय
या पानी पिया,
फिर कूडे की तरह
उन्हे फेक दिया ।
श्रम और कौशल से
बनी, बेची चीज
इतनी नाचीज ।

शिव

शम्भु के
सिर पर
जटा-जूट
भाल पर
चन्द्र है
गले मे
लिपटा
भुजग है
प्रलयकारी
बन्द त्रिनेत्र है
अर्ध-निमीलित
नयन दो
नग्न तन
पहने केवल
गज-छाला
अधर है
अभिराम स्मित
मुख-मण्डल
तेजोमय

जल्दी-जल्दी
बनाता जा रहा था ।
गॉव के बाहर
पेडो-खेतो के
वासन्ती परिवेश मे
वह कर्मकार
करता सृजन सुन्दरता का
मोहक कलाकार
लग रहा था ।

कुल्हड

कुम्हार ने
पोखरे से
चिकनी मिट्टी जुटायी,
फिर उसे
तैयार किया ।
मेहनत से
चाक घुमा-घुमाकर
कुशलता से
सुघड कुल्हड बनाये ।
फिर उन्हे
ऑवॉ मे
पकाया ।
बाजार जाकर
घूम-घूमकर
उन्हे बेचा ।
लोगो ने
उनमे

बस चाय
या पानी पिया,
फिर कूडे की तरह
उन्हे फेक दिया ।
श्रम और कौशल से
बनी, बेची चीज
इतनी नाचीज ।

शिव

शम्भु के
सिर पर
जटा-जूट
भाल पर
चन्द्र है
गले मे
लिपटा
भुजग है
प्रलयकारी
बन्द त्रिनेत्र है
अर्ध-निमीलित
नयन दो
नग्न तन
पहने केवल
गज-छाला
अधर है
अभिराम स्मित
मुख-मण्डल
तेजोमय

मन है
निर्विकार, निश्चल
ऐसे है
शिव सर्वेश्वर
सकल समेटे
अपने मे
फिर भी निर्लिप्त
सकल से
न कुछ भी
अछूता है उनसे
फिर भी, न कुछ भी
छूता है उनको
तभी तो
उन्हे हम
महायोगी
कहते है
और पूजते है
पर अफसोस है
बस कहते-पूजते है
न कुछ सीखते हैं ।

मन के वातायन

वे भी थे दिन
जीवन के
जब दिल मे जला करती थी आग,
तब दिखती थी सुन्दरता
एक वस्तु मे ।

ये भी है दिन
जीवन के
जब वह आग
हो गयी है शान्त बहुत कुछ,
खुल गये है अब
वातायन मन के
जिनसे आते है झोके
विविध वस्तुओ की
सुन्दरता के ।

उत्सव अनुभवो के

जब था बालपन
न थी तब
चिन्ताये, इच्छाये इतनी,
न थी तब
भाग-दौड इतनी
भूत और भविष्य मे,
वर्तमान मे ही
होता था अक्सर बसेरा,
और तब
तन-मन
रहते थे भरे
शक्ति एवम् प्राण से,
तभी तो होते थे तब
अक्सर उत्सव अनुभवो के ।

टालो नही काम ।

टालो नही काम ।
टालने से
छोटे भी काम
हो जाते है पहाड,
जिनके बोझ से
दबता रहता है मन ।
टलते काम
बन जाते है घुन,
धीरे-धीरे जो
करते रहते है
खोखला मन ।
टलते काम
कर लेते है कैद
अपने मे मन ।

वाक् और मौन

वाक्
शक्ति का
क्षय,
मन का
ज्वर,
यथार्थ-बोध का
बाधक ।

मौन
शक्ति का
सचय,

मन का
चन्दन,
यथार्थ-बोध का
साधक ।

अमलतास

इस समय
तुम्हारे सामने
है अमलतास ।
यह लदा है
सजा है
पीले फूलो के
गुच्छ-गुच्छो से ।
पहने है यह
क्या सुन्दर पीत वसन ।
इसे देखो,
अभी देखो,
नही कल,
इस पल का
सत्य यही है,
इस पल का
सार यही है ।

मेरे गाँव का तालाब

मेरे गॉव का तालाब
था मेरा तालाब

था मेरे जीवन का भाग
बचपन मे।
जुडा था इससे
भिन्न-भिन्न रूपो मे मै—
कभी इसमे नहाता,
कभी किनारे इसके बैठ
देखता रहता
विभिन्न ऋतुओ और कालो मे बदलती
मनोहारी मुद्राये इसकी,
कभी ढेला फेक
देखता कुलककर
इसकी उठती, फैलती, वर्तुल उर्मियॉ,
कभी किनारे इसके
रहता डूबा खेलो मे।

लेकिन, अब जब कभी
गॉव जाता हूॅ,
गुजर जाता हूॅ
इसकी बगल से
निहारते इसे।
अब इस ताल से
कट गया हूॅ मै,
इसलिए यह भी
कट गया है मुझसे।
इसे देख
खुशी की रेख
छू भर पाती है मुझे,
खुशी मे मै
नहा नही पाता
पहले की तरह।

अब मै खिचता हूँ इसकी ओर
पुरानी, मीठी
यादो के कारण,
अब यह
मेरे लिए
जीवन्त नही है,
मात्र पुरानी स्मृति है ।

सुषमा-उर्वरा

इस भू-खण्ड मे
छोटी-छोटी
भूरी, हरी
घास उगी है ।
वही
छोटे-छोटे
रग-बिरगे
भाँति-भाँति के
फूल उगे है ।
जरा देखो तो—
धरा
कितनी
सुषमा-उर्वरा ।

गले मिल ले

चलो गले मिल ले
आज होली है ।

न मै तुमको देखूँगा
न तुम मुझको देखोगे
फिर भी गले मिल ले
आज होली है ।
न मै तुमसे,
न तुम मुझसे
अच्छे-से चिपकोगे,
फिर भी चिपककर
गले मिल ले
आज होली है ।
तुम्हारे अलावा
और बहुतो से
मुझे गले मिलना है,
चलो फटाफट
गले मिल ले
आज होली है ।
सदियो पुरानी रस्म
गले मिलना है,
इसको निभाना है,
इसलिए, गले मिल ले
आज होली है ।
होली के तमाशो मे
तमाशा एक यह भी है,
इसे भी खूब कर ले
आज होली है ।

नही सोचते

जब हम

किसी रमणी के
सौन्दर्य से
आकर्षित होते है
तब हम
नही सोचते
कि हो सकता है
उसके मुँह से
आती हो बदबू
उसका पसीना
हो बदबूदार
उसके मल-द्वार से
निकलती है
अपान-वायु
और हो सकता है
उसके सुन्दर
तन के अन्दर
न हो
मन सुन्दर ।

बराबरी

तुम बात करते हो
आदमी आदमी की बराबरी की
यह केवल बात है
कोरा आदर्श है
आदमी आदमी
न कभी बराबर रहा है
न बराबर रहेगा
आदमी आदमी

जन्म मे अलग
मृत्यु मे अलग
अलग-अलग माँ-बाप
अलग-अलग परवरिश
अलग-अलग परिवेश
अलग-अलग परिस्थितियाँ
अलग-अलग देश-काल
अलग-अलग खान-पान
अलग-अलग शिक्षा-दीक्षा
अलग तन, अलग मन, अलग दिल
हर-एक की
अलग दुनिया
हर आदमी
अलग एक व्यक्ति ।

हादसो की आशका

तुम मुझे
ऊपर-ऊपर
देखकर
समझते हो
मै खुशनसीब हूँ ।
क्या तुम
मेरे भीतर
झाँककर
देख सकते हो
कि पल-पल
हादसो की
आशका से व्यथित

मै जीता हूँ
जो मेरे साथ
घट सकते है,
उनके साथ
घट सकते है
जो मेरे अजीज है।

वह चलते बनता है

गोरा-चिट्टा
नहाया-धोया
शुभ्रवस्त्रधारी वह
लोगो से
मीठी बाते करता है
तपाक से
हाथ मिलाता है
बड़ी जल्दी
लोगो के कन्धे पर
हाथ रख देता है
लेकिन जब भी
कर्त्तव्य निभाने का
अवसर आता हें
चलते बनता है।

तपन के दिन

तपन के दिन
हमे देते है आवाज

अमलतास की
सुनहरी सम्पदा
गुलमोहर की
सिन्दूरी सम्पत्ति
भर लो
मन की
झोली मे,
जैसे बाग मे
लडके भरते है
पके आम
झोली मे।

प्रतिदान

आपने
मेरे लिए
कभी किया था
काफी कुछ।
फिर
सम्बन्ध
आपके-मेरे
बिगड गये,
वर्षो तक
हम लोग
रहे जुदा
नदी के कूलो-से।
लेकिन,
जो कुछ
किया था

आपने पहले,
उसका प्रतिदान
न कुछ
मै कर पाया,
और आप
चल दिये
आह ।

खूबसूरत रात

दिन मे
गरमी की आग मे
खूब जले थे,
लेकिन
रात आयी है
हल्के बादलो से घिरे
दूधिया चॉद को लेकर
शीतल समीर को लेकर ।

दिन मे
दिल मे
घाव जो हुए थे
उन पर
लगा रही है मरहम
खूबसूरत रात ।

दो फूल

उनकी बगिया मे

खिले हुए थे
सुन्दर, ताजे
प्राणो से प्रिय
दो फूल ।

एक दिन
अपनी बगिया मे
वे बैठे थे
निश्चिन्त
बिल्कुल निश्चिन्त
सुख से ।

तभी अचानक
एकदम अचानक
विकराल हवा का
झोका आया
जिसमे उड गये
दोनो फूल ।

जुदाई

पति-पत्नी के
चिर झगडे का
निकला परिणाम
जुदाई ।
इस कारण,
वियुक्त हो गया बेटा
अपनी माँ से ।
वह था शिशु,
इकलौता बेटा,

अकेली सन्तान ।
हो गया बेटा वचित
सदा-सदा को
अपनी माँ के
अनुपम, असीम प्रेम से ।
और बेचारी माँ
हो गयी अभिशप्त
पल-पल जलने को
ऐसी आग मे
जिसका शमन करेगी
बस उसकी अन्तिम साँस ।
माँ-बेटे की
यह करुण कहानी
क्या समझेगी
बेदर्द दुनिया ।

प्रतीक्षा

प्रतीक्षा करते-करते
सात दिनो तक
बीतता एक-एक दिन ।
एक दिवस
बीत जाने पर
कम हो जाता
एक दिवस ।

अभिलषित वस्तु की
आशा और निराशा के
पालने मे झूलते
बीतते ये

सात दिवस ।
नीरस, पीडित जीवन
घिसटता इस तरह ।
मन मे बॅधी हुई आशा
जब-तब सुख का
दीप जलाती,
और निराशा
करती पैदा
अन्धकार मन मे ।

प्रतीक्षित दिन
यदि पूरी होती आशा
होता मन खुश
पर अल्प समय को,
फिर मन लाता ढूँढ
वस्तु दूसरी
आशा की ।
यदि प्रतीक्षित दिन
लगती हाथ निराशा
होता दु ख मन को
अधिक समय को,
लेकिन फिर मन
देता दिलासा–
मिल सकती है
वस्तु अभीप्सित
अगले सात
दिवस उपरान्त ।

इस तरह,
लालची, कामी मन
आशा एवम् निराशा के वृषभो से

खीचता जाता
जीवन की गाड़ी ।

आशा-निराशा

आशा
प्रकाश
पल भर का,
निराशा
अन्धकार
दो पल का ।

आशा
फूल बबूल का,
निराशा
शूल बबूल का ।

आशा
विरल सुजन,
निराशा
सघन दुर्जन ।

वर्षा

प्रचण्ड आतप
का अनुगमन
मृदु पावस
ने किया है,
मानो

दु ख का अनुसरण
सुख ने
किया हो ।
अब ताप
तन का
दूर होगा ।
शुष्क मन मे
नव प्रान का
सचार होगा ।
विजन नभ मे
बादलो की
अब बसेगी
बस्ती रँगीली ।
धरती न अब
मनहूस होगी,
पहनकर सारी हरी
इठलायेगी ।
सजल भू पर
सस्य की
सजीवनी
फिर उगेगी ।

दो पत्र

तुमको
अपनी रचना की
तारीफ करता
पत्र मिला ।
उसको पढकर

तुम्हारे मन मे
बजने लगी घण्टियाँ ।
पढा पत्र
पुन पुन
पुलकित मन ।
फिर रख लिया सँजोकर
उस निधि को,
उस यादगार को ।

तुमको
अपनी सज्जनता के दण्डरूप
धमकी-भरा
पत्र मिला ।
उसको पढकर
तुम्हारे दिल मे
लोटने लगा साँप ।
पत्र पढा पुन ,
फिर आतकित मन
रखना पडा उसे,
मानो घुस आया हो साँप
घर मे ।

अदाज

उसने अपने सहयोगी की
अचानक मृत्यु का
समाचार दिया ऐसे
कि तुम्हे लगा
उस पर

कुछ असर ही
नही हुआ,
मानो पत्थर पर
गिरा हो पानी ।
लेकिन उसके बयान से
न लगाओ अदाज
उसके दिल का ।

बीमारी

बीमारी ।
तूने हमको
जीवन के
रग नये
दिखलाये ।
चाहे हुई
हमारी कम,
पहले से
मन शान्त हुआ ।
वैर-भाव
भूले-बिसरे,
करुणा का
विस्तार हुआ ।
मन का अहम्
हुआ न्यून अति,
विनय-भाव मे
सवृद्धि हुई ।
वृत्ति पाशविक
मानस की

मानवीय रूप मे
तब्दील हुई ।
जादू की छडी
फेरकर तूने
व्यक्तित्व हमारा
बदल दिया ।

पानी का अभाव

इन दिनो नल मे
पानी का है अति अभाव ।
हम ठीक से
नही कर सकते कुल्ला,
अच्छे से नही धो सकते हाथ-पॉव,
नहाने की बात रही दूर ।
शौचालय गन्दा पडा हुआ है,
उसमे जाते भिनकता मन ।
कपडे गन्दे पडे हुए है,
मानो पड़ी हो लादी धोबी की ।
तन गन्दा, मन गन्दा,
घर मे है सब कुछ गन्दा ।
मन बीमार बना है,
दुनिया बेजार हुई है ।
गन्दगी के इस कुराज मे
रोगो का डर लगता है ।
मुश्किल से मिले
स्वल्प कीमती पानी को
खरचते डर लगता है,
होती है और परेशानी ।

पानी का अभाव
जीवन-रस चूस रहा है,
और उत्पन्न कर रहा है
घबराहट, चिन्ता, मायूसी ।
इसके अलावा,
इसने कर दी है मन्दित
जीवन की गति ।
बैठे मन दोहराता
बार-बार पुरानी बात–
'पानी बिन सब सून' ।

आपने

जब मन
बुझाया
आपने,
तब
खयालो मे रही
जेठ की
धूप-सी ।
जब मन
सँवारा
आपने,
तब
खयालो मे रही
पूस की
धूप-सी ।

कसक

गौर वर्ण की
थी वह नवयुवती,
जानी-पहचानी ।
सम्मोहक थी
सुषमा उसकी ।
तभी मिला था
उसको स्वर्णिम अवसर
किसलय-से कोमल
मूँगो-से लाल
अनछूए अधरो के
मादक चुम्बन का ।
लेकिन उसने
प्रेमिका की वफा मे
रख दिल पर पत्थर
आहे भर-भर
वह उन्मादक अवसर
छोड़ दिया था ।
लेकिन तब
दिल मे उसके
जो शूल चुभा था,
अब तक वह
कसक रहा है ।

ग्राम-बाला

काली-कलूटी
ग्राम-बाला

केवल कमर मे
कुछ वसन बाँधे
आम्र-कानन मे
थी तैनात चौकीदार ।
तभी उससे
कुछ बाते ऐसी हुई थी,
नोक-झोक भी
कुछ ऐसी हुई थी,
और हम दोनो
कुछ ऐसे हँसे थे,
कि उमर बीते
बचपने के
वे प्रेमिक मधुर पल
खामोशियो मे
आज भी
होठो पे हमारे
है जलाते
दीप स्मिति के ।

फूल

तुम
बेरहमी से
खटाखट
तोड रहे हो फूल ।
हो गये हो
तुम जालिम
खूबसूरत, नाजुक, बेजुबान
फूलो के प्रति,

और मेरे भी प्रति
जिसने इन्हे
किया है जीवित
वृन्तो पर
मुस्कराने को ।

गुलशन की दौलत

उपवन मे ताजे
फूल खिले थे,
ज्यो आश्विन-नभ मे
नखत खिले हो ।
उपवन था
सुरभित, सुन्दर ।
तभी वहाँ
एक लोलुप आया ।
चुन-चुन
अच्छे फूल सभी
तोड लिये
उस निष्ठुर ने ।
जरा देर मे
गुलशन की दौलत
लूट लिया
उस नादिर ने ।

सन्त

थे वे
सचमुच सन्त ।

खुद वे
अपने को
मानते थे
साधारण मनुष्य ।
लेकिन,
उनके भक्तो
और प्रशसको ने
देव उन्हे
मान लिया,
ओर फिर
लगे करने उनसे
दैवी आशाये ।
स्वाभाविक है,
अक्सर उनकी आशाये
होती है भग्न ।
अरे, भाई ।
मनुष्य हो जाये
ऊँचा सन्त,
पर आखिर
रहता तो है
मनुष्य ही ।

सावन

सन्तापकारी ताप की
कोख से
फूट निकला
सावन सुहावन ।

आकाश मे
छाने लगे है
विविध बादल,
लोचनो को
मिलने लगा है
सुखद दर्शन का
ससार नूतन ।

बादल बरसते
टप-टप कभी,
तड़-तड कभी,
रिम-झिम कभी ।
झूम-झूम जब
बादल बरसते,
मन हमारा
झूम उठता
मानो पिया हो
जाम मय का ।

लेकिन कभी
बादल गरजते,
उमडते-घुमडते,
बिजली भी चमकती,
पर ये छलिया
न बरसते,
तब आशा हमारी
भग होती,
जी हमारा
खीझ उठता ।

सूखी धरा
उजडी धरा पर

बिछ रही है
नयन-सुख
मनमोहिनी
दरी हरी ।
मन हमारा
करने लगा है
अठखेलियाँ
उस पर ।

सूखे जलाशय
भरने लगे है
हास करते
नीर से,
तृप्त करते
तृषित तन-मन ।

झुलसाती हुई जालिम हवा की
जगह बहने लगी है
भीगी हवा
मीठी हवा
तन चूमती
मन-मोद करती ।

देवता का चित्र

देवता के चित्र को
शीश नवाते हो,
नही चाहते हो
शीश नवाना भी ।
डर और स्वार्थ

ठेलते है तुम्हे
शीश नवाने,
झूठ, चित्र का
और देवता के
अनुकम्पित होने का
रोकता है तुम्हे
शीश नवाने से ।
उलझे तुम
इस द्वन्द्व मे,
मूढ बने
भटकते हो ।

अखबारवाला

आधी रात से ही
बरस रहा है पानी ।
लेकिन सुबह
कुछ देर से ही सही
भीगते दे गया अखबार
अखबारवाला ।
उसे देखकर
विस्मय हुआ कुछ,
भीगा देखकर
करुणा जगी कुछ,
अखबार पाकर
लगा अच्छा,
फिर हुआ कुछ गर्व
इस विचार से

कि भिन्न हूँ मे उससे ।
लेकिन नही
भिन्न है
हमारी परिस्थितियाँ ।

खत

दोस्त ।
कभी मिला था
तुम्हारा एक खत ।
उसे पढकर
मेरे बुझे मन मे
एकाएक
जल उठा था दीपक ।
फिर,
धीरे-धीरे
उसकी लौ
होती गयी मन्द,
और फिर
बुझ गया दीपक ।
एक दिन फिर,
मिली तुम्हारी
दूसरी चिट्ठी ।
फिर जला दीपक ।
लेकिन इसका भी
हुआ वही हश्र ।

तारीफ

तुम चाह रहे थे
बहुत तारीफ,
उसकी खातिर
खोया अपना
सुख-चैन,
मचायी बहुत
भाग-दौड ।
लेकिन जब
मिलने लगी तुम्हे तारीफ,
जल्दी ही उससे
ऊब गये तुम,
और उससे
होने लगे आजिज ।
तब तुम्हारी अक्ल
लगी ठिकाने–
तारीफ है
मन की कमजोरी
जो जोक-सी
चूस डालती
जीवन-रस ।

वादे

अनुराग प्रबल था
मेरे मन मे,
तुम रूप-राशि थी
प्रगट सामने,

तब मादक मन ने
किये थे वादे ।

अब नही रहा
अनुराग प्रबल वो,
वह रूप-राशि भी
नही रही तुम ।
मन की मादकता
रीत चली है,
वादो की ताकत
बीत चली है ।

कमीज

ऐ मेरी सुन्दर कमीज ।
वर्षों तुमको मैने
बडे शौक से, बडे नाज से, पहना ।
किन्तु आज तुम फटकर
पोछा बनी पडी हो ।
मेरे तन के भूषण ।
नही चाहता तुम पर
अपना पग रखना ।
ओ मेरी पुरानी सगिनि ।
अब तो तुम्हे दूर से देख
कभी मुसका, कभी भर आह
कभी सन्तुष्टि-भाव से
कभी वैराग्य-भाव से
कर लेता हूँ ताजा
तुम्हारी स्मृतियाँ ।

हे सुमन ।

हे सुमन ।
नुच जाओगे
अविलम्ब तुम ।
इसलिए,
देख रहा हूँ
इस मधुरिम प्रभात मे
तुम्हारी मधुर मुसकान
मै डरा हुआ,
जैसे कोई देखे
अपने प्रिय को
समझकर
कि निश्चित है
आसन्न मरण उसका ।

सपने

रोज रात मे
स्वप्न देखते तुम
मीठे-खट्टे ।
है चमत्कार
ये मन के,
और वरदान
प्रकृति के,
क्योकि
पुत्र भाँति
रक्षक है
ये मन के,

एवम्
इन्हे समझकर
झॉक सकते तुम
अपने अन्दर ।

सन्दूक

इसपाती था सन्दूक ।
लगा था उसमे
पक्का ताला ।
यह सब देख
मेरा जी ललचाया ।
लगा ढूँढने चाभी,
लेकिन कही
मिली नही ।
तब लगा काटने
पक्का ताला ।
आखिर जब
कटा वो ताला,
सन्दूक खोल
झट झॉका
उसके अन्दर ।
मगर, हाय ।
जब चीजे देखी,
दिल थाम
वही पर
बैठ गया ।

सब्जीवाला

उसने
दिन भर
घूम-घूमकर
सब्जी बेची
मार झेलते
मौसम की
बाते सहते
लोगो की ।
शाम ढले
घर लौटा
पॉव थके
मन डूबा
सोच-सोचकर
सोयेगे परिजन
अधखाये ।

खत

हर रोज ही
रहता है इन्तजार
खतो का ।
पर हर रोज
आते नही खत ।
इसलिए, उदासी से
घिरता है मन अक्सर ।
अक्सर
ऐसा भी होता है –

खत आने पर
देख उन्हे
हम होते है निरास ।
हमे तो रहता है इन्तजार
कुछ खास खतो का
मुश्किल से ही
मिलते है जो ।

क्यो जल गये ?

उस सुन्दरी को
तुम देख लेते हो
जब भी गुजरते हो
उसकी राह से ।
आज उसको
दूसरे को ताकते देख
और उसको लजाते देख
अधिक खूबसूरत हो
नत नयन हो,
तुम जल गये ।
लेकिन, क्यो ?
सुन्दरी तो होती ही है
देखने को,
और लगता है
उसे अच्छा
उभरती है
उसकी छवि और
जब कोई उसको ताकता है
मदभरी ऑख से ।

गॉव का तालाब

गॉव के बाहर
फैले विशाल तालाब मे
फैला है जीवन गॉव का ।
सुबह-सुबह
लोग आते है,
शौच-क्रिया बाद
इसके जल से स्वच्छ होते है,
दातून, टूथ-ब्रश या उँगली से
दॉत मॉज
कुल्ला करते है,
मुँह धोते है ।
बैठ शिला-खण्डो पर
इसके किनारे
हाथ-पॉव धोते है ।
साबुन से, या बिना साबुन के
कपडे धोते है ।
घुसकर तालाब मे
होकर खडे
देह मलते है
उसी मे थूकते है,
डुबकी लगा
कभी तैरकर भी
नहाते है ।
फटाफट
लोगो के
सब काम होते है ।
बोलते-बतलाते
सहज ढग से

लोग काम करते है ।

तालाब
गॉव के
सब लोगो का ।
बिना भेदभाव
एक ही नीर का
सब उपयोग करते है
उसी मे गिराते
थूक मुँह का
मैल तन का ।
अमीर-गरीब का,
निर्बल-सबल का,
बूढे-जवान का,
ब्राह्मण-शूद्र का,
मिटाता है अन्तर
भले ही कुछ काल को
तालाब का समदर्शी जल ।

दिलासे, सीखे

सुबह थी
जाडे की ।
निकला था
सैर पर ।
ठिठका मै
एक गॉव के बाहर
बडे तालाब के किनारे ।
ठिठका,

तो रुका रहा
देखता मुग्ध
निपटते लोगो को
अपने-अपने
कुछ दैनिक कर्मो से ।
देखा मैने –
सहज ढग से
बिना बँटवारे के
सामुदायिक रूप मे
सफाई-गन्दगी का छोड भेद
औघड रूप मे
और बडे सस्ते मे
फटाफट निपटा लेते है लोग
अपने कितने
रोजमर्रा के काम ।
मुझ शहरी को
आज के प्रभात ने
दिये दिलासे
दी सीखे ।

झझट

सोचते हो –
बच्चो के
बडे हो जाने पर
मिलेगी फुरसत
झझटो से ।
लेकिन,
क्या बुढ़ापा तुम्हारा

निश्चित हैं ?
क्या निश्चित है
तब नही होगी झझटे ?
फिर क्यो नही जीते
ये दिन झझटो के
पूरे मन से,
पूरी शक्ति से ।

हे दु खियारे कुत्ते !

हे दु खियारे कुत्ते !
लौकी-सी निकली लाल
तुम्हारी काँच ।
सग उसी के
एक जगह पर
बैठे हो ।
वहाँ से
अब तुम
नही हिल सकते ।
मुख पर
पीड़ा की चादर ओढे,
काँपते
कष्ट और सरदी के मारे,
फिर भी बैठे
सीना ताने ।
उपचार तुम्हारा
नही कर सकता कोई ।
आकर तुम्हे
नही पुचकार सकता कोई ।

खाने तक को
रोटी का टुकडा
नही दे सकता तुमको कोई ।
अब तो तुमको
हर तकलीफ झेलते
उसी जगह पर
मरना है ।
कोई नही तुम्हारा ।
तनहा,
बिलकुल तनहा,
मुसीबत मे घुट-घुट
मरना है ।

जरा देखो तो ।

तुम
अपने कमरे मे
कुरसी पर बैठे
मजदूर को
धूप मे
हथौडी से
ईटे फोडते
देख रहे हो
और सोचते हो
वह मजे मे है ।
जरा देखो तो
उसकी स्थिति से
गुजरकर ।

खौफनाक खबरे

सुबह-सुबह
अखबार खोला और पढा-
कही ट्रक और जीप के बीच
हुई टक्कर के कारण
कई लोग मरे, अनेक हुए घायल,
किसी युवती ने
प्रेम मे असफलता के कारण
कर ली आन्महत्या,
एक युवक
बेरोजगारी से तग आ
ट्रेन से कट गया,
एक जगह
साम्प्रदायिक दगे हुए
जिसमे गयी
कई लोगो की जाने,
कही आतकवादियो ने
एक ही परिवार के
कई लोगो की हत्या कर दी,
किसी शहर मे
बन्द के दौरान
उग्र प्रदर्शनकारियो पर
पुलिस ने लाठी-चार्ज किया,
एक वायु-यान का
कुछ उग्रवादियो ने
अपहरण कर लिया
और यात्रियो को
बन्धक बना लिया,
ईरान-इराक की

चल रही लडाई मे
अनेक जाने
आज फिर गयी,
भारत की पश्चिमी सीमा पर
तनाव बढ गया है,
भारत सरकार ने
कोयले, लोहे और तेल के दाम
सुरसा-सा मुँह फैलाती
महँगाई के मध्य
बढा दिये है ।
इन खौफनाक खबरो के साथ
शुरू हुआ
आज का मेरा दिन ।

कोई गया मन्दिर

कोई गया मन्दिर
माँगने,
कोई गया मन्दिर
मन बदलने,
कोई गया मन्दिर
दृश्य देखने,
कोई गया मन्दिर
व्यापार करने,
कोई गया मन्दिर
लूटने,
कोई गया मन्दिर
चुराने,
कोई गया मन्दिर

भय से,
काइ गया मन्दिर
अनुकरण से,
कोई गया मन्दिर
आत्मा की पुकार से ।

नया खिलौना

भूखे बच्चे को
पकडा दिया खिलौना,
कुछ पल को
थम गया
उसका रोना,
फिर भूल खिलोना
लगा वो रोने ।

वैसे ही,
नये साल का
खिलौना पाकर
कुछ ही समय
हमने भरी कुलॉचे,
फिर जल्दी ही
बिसर गया
नये साल का
नया खिलौना,
और रहे हम
जैसे के तैसे ।

खेतो के बीच

पौष की सुबह
सैर पर निकला ।
घूमा खूब
हरे-भरे खेतो के बीच
धीरे-धीरे
रुक-रुककर ।
अकथ, अगम
इनकी सुषमा ने
बरसायी बूँदे
खुशी की मन मे,
दी नयी दिशाये
बॅधे मन को,
खोली गॉठे
जकडे दिल की ।

पत्थर का कोयला

तुम पत्थर के कोयले से
लापरवाही के साथ
ॲगीठी पर
पकाते हो खाना,
गरम करते हो पानी
ठण्डी मे नहाने को,
और तापते हो
दहकती आग
ठण्डी मे ऊष्मा का
सुख पाने को ।

लेकिन गरीब औरत
ढूँढ-ढूँढ बिनती है
निम्न श्रेणी के
छोटे-छोटे टुकडे
पत्थर के कोयले के
गिरे रेलो से
रेल-लाइनो पर
ताकि ज्वाला
उसके पेट की
कुछ तो हो शान्त ।

अन्तर की सच्चाई

बैंक के
मेरे खाते के
हिसाब की गणना मे
गलती हुई
क्लर्क से ।
मै वह गलती
पकड न पाया ।
एक दिन
सामने आयी
जब वह गलती,
क्लर्क ने मुझे
ठहराया दोषी
जोकि बतायी नही थी
उसे त्रुटि ।
मैने उसको
ठहराया दोषी,

उसने ही तो
जोडा था गलत ।
लेकिन,
लोगो के खातो का
हिसाब करना
उसका है
आम काम,
इसमे भूल-चूक
हो सकती है ।
जबकि अपने खाते का हिसाब
है मेरे लिए
एक काम,
जिसे चाहिये
मुझको करना
और जिसमे सम्भव है
गलती बहुत कम ।
समझा गया-
मैने जोडा था
और छिपायी गलती
क्योकि उससे हुआ था
मुझको बडा लाभ ।
लेकिन सच्चाई यह है-
मैने जोडा था हिसाब जरूर,
पर मुझसे भी हुई थी
वही भूल-चूक ।
कितना विचित्र सयोग दुर्भाग्यपूर्ण ।
लगा मुझ पर
झूठा अपलोक ।
पर मेरे अन्तर की सच्चाई ने
दी मुझे शक्ति
इसे सहने की ।

ग्लानि

न थी ऐसी कोई जल्दी
दो मिनट रुककर
शान्ति से सुनी जा सकती थी
याचना उस बूढे की
जो था मुसीबत का मारा
जिसके बारे मे तुमको
हुआ था सन्देह कुछ
कि है वह भिखमगा ।
उसे हडबडी मे तुमने
दिये थे पचास पैसे
जिसके लिए
बाद मे तुमको
हुई थी ग्लानि ।

चले दुम दबाकर

उसने तुमसे
ठगने चाहे
पॉच पैसे,
गुस्से मे तुमने
उसको कहा लुटेरा,
यह सुन
उसका साथी आया
और लगा झगडने,
उसको समझ सबल
तुम झुके तुरत,
जैसे-तैसे

करी सुलह
और चले
दुम दबाकर ।

माला

खरीदी
फूलो की
लम्बी, मोटी माला
तुमने
किसी को
पहनाने ।
उसने
पहनाते
या तो
थामी माला
सकोच जताते,
या फिर
उसने माला
पहनी तो
पर झट रख दिया उतार ।
क्यो होने दिया
तुमने नुकसान
इतने फूलो का
सुन्दर, कोमल,
नाजुक, बेजुबान ?

अब भी

जब तुमको
देखा था
तब तुम थी
दुबली-पतली
हल्की-फुल्की
गोरी, ताजी
चिकनी, मीठी
साल बीस की
कमसिन नारी
अति आकर्षक
अति अभिराम ।
तुमको देखे
गुजरे बीस साल ।
सुना है,
अब तुम
माँ हो
कई बच्चो की ।
लेकिन
मेरे मन मे
तुम अब भी
वही बनी हो ।

प्रेम-बन्धन

तडप,
बेचैनी,
घुटन,

सिरदर्द,
उदासी,
अवसाद,
रुदन,
फिर भी,
तमाम समझ
और तर्क
के बावजूद
तोडे टूटता नही
मन का
प्रेम-बन्धन ।

मृत्यु

आसन्न मृत्यु का नही
मृत्यु की निश्चितता का भय
मन पर प्राय छा जाता है,
तब–
मन उदास और निरास हो जाता है,
सब कुछ निस्सार
जीवन निष्प्राण निष्प्रयोजन
लगता है,
विस्मय होता है
कैसे जीवन जीते है लोग
वे तो चलते-फिरते मुरदे लगते है,
और लगता है
जीवन स्वप्न
मृत्यु सत्य,
जीवन पथ
मृत्यु गन्तव्य ।

अनन्त काल-क्रम मे
यह जीवन
क्षण भर का
बस एक बार का,
न था कभी
न फिर होगा कभी,
शाश्वत शून्य की
बस एक झलक ।

मन और हृदय

मन समझाते
हार गया
पर हृदय न माना,
रमा रहा यह
अश्रु-आह-सकुल जीवन मे ।

लेकिन
कालान्तर मे
देखा मन ने
आहत व्यथित हृदय
उनसे विलग हो रहा ।
इसका रिश्ता
उनसे समाप्त अब ।

मन जान गया
हृदय का
निरीक्षण अपना,
इमकी
समझ अपनी ।

मन ने
यह भी जाना
हृदय की शक्तियाँ ये
उससे अधिक शक्तिशाली
ज्यादा-स्थायी-परिणामजनक
लेकिन निगूढ ।

निर्णायक

योग्यता की नही पूछ
विद्वत्ता की नही कद्र ।
योग्य विद्वान व्यक्ति
अपने को प्रस्तुत भी करे,
तो उसकी अस्वीकृति
शरारत और तिरस्कार से ।
उसका स्वाभिमान
और अक्खड़पन
अयोग्य हीन निर्णायको के
अहम् पर चोट ।
वे पूछते पहचानते है
बैठकबाजो को
चापलूसो को ।

अविस्मरणीय सन्ध्या

गरमी के उस दिन
लम्बी, कठिन
साइकिल-सवारी के बाद

मै पहुँचा था ननिहाल
पिता के साथ
दीर्घ काल उपरान्त ।

उसी दिन
सन्ध्या मे
खेत मे खडे
देखा था मैने
खेतो के पार
गॉव को घेरे
उसके पोषक
विशाल ताल मे
खिले कमल
उतराते पत्ते,
उन पर
जल पर
नीरवता मे छायी
अस्ताभिमुख अरुण की
सिन्दूरी स्वर्णाभा ।
और, ताल के पार
दिखा था ढाक-वन ।

सारी की सारी
वह काल-जयी छवि
श्रम-श्लथ, भाव-विह्वल
बाल मन को
छू इस तरह गयी
कि अब भी
अक्षय निधि-सी
स्मृति मे सचित ।

छलना

तुम्हारा सुवेश
तुम्हारी मीठी वाणी
छलती रही मुझे
बहुत दिन ।
लेकिन,
जब मै
आया तुम्हारे पास
तब देखा
तुम्हारा घिनौना रूप ।
तब से,
भिनकते तुमसे
हो गया हूँ मै
सावधान ।

क्यो लटकाये हो ?

देकर विश्वास,
लटकाये हो
उसका काम ।
कब तक करे
वह इन्तजार ।
क्या प्रीति यही है ?
क्या नीति यही है ?
क्या उसका क्लेश
क्या लटकाने का क्लेश
नही प्रताडित करता तुमको
छिपे तौर से

खुले तोग से
तरह-तरह मे ?

वसन्त

रग-बिरगे फूलो के खिलने का
सुन्दर मोसम है,
पुराने पत्तो के झडने का
वेरागी मौसम है,
नयी कोपलो के आने का
बाल-सरीखा मौसम है,
मीठी, मस्त हवा बहने का
उन्मादक मौसम है,
कोयल की कुहू-कुहू मे अवगाहन का
आया मौसम है,
खेतो मे फसलो के पकने का
स्वर्णिम मौसम है,
किसान की खाली बखरी भरने का
अन्नपूर्णा मौसम है,
देह टूटने, मन बौराने
का यह मौसम है,
कोमल, नाजुक और रँगीले
भावो वाला मौसम है ।

जिज्जी के विना

तुम कहती थी –
मै जिज्जी के विना

नही रह सकूँगी ।
कैसे रहूँगी ?
लेकिन,
जिज्जी को शादी बाद जाना
सो चली गयी ।
तुम बहुत रोयी, चिल्लायी,
तुमने बहुत सिर पटका,
लेकिन जो हुआ
उसे तुम्हारे रोने से
बदलना तो था नही ।
हारकर तुमने
धीरे-धीरे
कठोर स्थिति से
समझौता कर लिया ।
और अब तो तुम
अपनी नयी दुनियाँ मे खुश हो

छोटी-छोटी बाते

छोटी-छोटी बाते
आती मन मे कितना,
करती कितना परेशान ।
छेडो नही इन्हे,
आने दो,
और इन्हे
देखो भर,
पर पूरा ।
इस तरह
एक दिन ये

या तो हल हो जायेगी,
या फिर
धीरे-धीरे
गल जायेगी ।

चिडिया

छोटी, सुन्दर,
काली, कुछ नीली
और चमकीली
देखी चिडिया,
चोच से जिसने चूमा
लाल फूल
सिर्फ पल भर,
फिर उड गयी
पीत पुष्प के पास,
और उसके भी साथ
किया वही सुलूक
सिर्फ पल भर,
फिर उड गयी फुर्र से
न जाने कहाँ ।

सन्त्रास

जीवन के सन्त्रासो से
क्यो भागते फिरते हो ?
क्यो नाना उपाय
उनसे बचने के

ढूँढते फिरते हो ?
इस तरह उनसे
न बच पाओगे।
वे रहेगे करते
तुम्हारा पीछा,
परछाई की भाँति।
सन्त्रासो मे जीकर ही
उनको समझ सकोगे,
उनसे उबर सकोगे,
उनके भय से
अपना पिण्ड छुडा सकोगे।
और तब,
नही ढूँढने होगे
उनसे बचने के उपाय।
और तभी,
तुम्हारा जीवन होगा
सहज और सच्चा,
निर्भीक और ऊँचा,
सरस और चतुर्दिक,
स्वतन्त्र एवम् अनन्त।

मानवता के कुबेर

वे
धीर है,
गम्भीर है,
शान्त है,
सहनशील है,
आस्थावान है,

करुणावान हे,
ईमान के पक्के ह,
ड्यूटी के सच्चे हे,
सत्कार से शोभित ह,
लेकिन,
उनके पास
न डिग्री है,
न पद है,
न धन है,
न उनका
नाम है,
फिर भी वे
मानवता के कुबेर है।

पतझड

पतझड की
अपनी सुन्दरता।
पत्ते गिरते
हवा मे
बल खाते,
फिर पट से
धरती पर
चू पडते,
जहाँ से
उत्पन्न हुई
उनकी
विटप-माताये।
बिछे धरा पर
ढेर-के-ढेर

बहुरगी पत्ते
बदलकर
अपना रग हरा
सुख-दु ख के
भाव जगाते ।
वे सुख देते
अपने रूप-रग से,
पवन मे
अपनी थिरकन से,
और सजावट से
करते जो वे
आदि-माँ भू की ।
इससे भी
देते वे सुख
कि चूकर दरख्त से
दी शक्ति उसे
नयी कोपलो के
नये सृजन की ।
लेकिन,
वे दु ख उपजाते
अन्त से अपने ।

गरीब लड़का

घिर आयी थी रात ।
सडक किनारे,
खम्भे मे लगे ट्यूब की
सफेद रोशनी मे बैठा लडका
पहने मैली

बनियाइन-नेकर
बना रहा था बीडियाँ,
झुकाये सिर
धरती मे
धँसा हुआ-सा ।

करौदो के झाड

सडक के किनारे
करौदो के ये झाड
समय-समय पर
अति लघु, श्वेत पुष्पो से
लद जाते है,
जैसे
समय-समय पर
आसमान
तारो से
भर जाता है ।

लेकिन,
जल्दी ही
शहर का फैलाव
इन सुन्दर झाडो को
खा जायेगा ।

धर्मान्ध

सुबह की हवा मे
वासन्तिक खुनुकी है,

बगल मे महुवा
शराबी गमक छोडता
धरती पर
श्वेत, किञ्चित पीत,
लघु, वर्तुल फूलो की
अभिराम चादर बिछा रहा है,
पास मे नीम के
गुच्छ-गुच्छ, धवल पुष्प
भीनी सुगन्ध
चतुर्दिक फैला रहे है,
लेकिन तुम
कुदरत की
इन नेमतो से
बिल्कुल बेखबर
पीपल तले बैठे
उसकी पूजा मे लगे हो ।

समय का फेर

अस्पताल के
फैले प्रागण के
एक खुले कोने मे
पूस की रात
किसी तरह
जुगाड कर
बना रहे वे खाना
विपदा के मारे ।
लेकिन,
वे ही कभी

अपने घर मे
आग तापते
शाक से खाते थे
बने-बनाये
सुन्दर व्यजन ।

ईर्ष्या

तुम्हे
सामने रखा
भोजन का थाल
नही रुचता,
क्योकि
तुम्हारे सहकर्मी का थाल
इससे बढिया है,
लेकिन,
क्या इस जलन से
तुम्हारा थाल
बदल जायेगा ?
और,
सहकर्मी के थाल से बढिया
दूसरे का थाल है,
उससे भी बढिया
किसी और का थाल है ।
इस तुलना का
क्या कोई अन्त है ?
इसलिए,
थाल जो तुम्हे मिला है
उसे प्रेम से स्वीकार करो ।

बँदरिया

जा रहा था मदारी
लिये बाँदर-बँदरिया ।
दौडे कुत्ते
उनकी ओर ।
एक जालिम कुत्ते ने
धर दबोचा बँदरिया को ।
मदारी ने डण्डे से
कुत्ते को मार भगाया
और छुडाया
बँदरिया को ।
लेकिन बँदरिया
बहुत चीख रही थी,
क्योकि कुत्ते ने
कर दिया था
उसको घायल ।
निर्दयी मदारी
ले चला
उसे खीचते ।
बँदरिया बेचारी
चीखती-चिल्लाती
चली घिसटती
भोगती अकेले
अपनी पीडा ।

बीमारी के कारण

वे थे
बहुत दु खी

अपनी पत्नी की
बीमारी के कारण ।
लेकिन
जब सुना
पडोसी भी
है दु खी
अपनी पत्नी की
बीमारी के कारण,
तो हुआ
कुछ कम
उनका दु ख ।

ढोग

बीस बिस्वा वाले
मिसिर जी
गये थे बारात ।
उन्होने
खाया नही भात,
क्योकि बना था
लडकी वाले के घर
नही थी जिसकी
बीस बिस्वा मर्याद ।
उन्होने
जनवासे मे
लडकी वाले के घर से आये
दाल, चावल, आटा, आदि से
स्वय ही बनाया
अपना खाना ।

वही मिसिर जी
एक दिन नगर मे
खा रहे थे
होटल मे खाना ।

महरी

उस महरी को
करना पडता काम
उनके घर
दो घण्टे
प्रतिदिन,
पर पाती
मुश्किल से सौ रुपये
महीने भर मे ।

और, सुविधाये क्या ।
उसके लिए
नही रविवार,
नही त्योहार,
जब चाहो
निकाल दो उसको,
जो चाहो
कह दो उसको,
बोली, तो
कही गयी
खोलती जबान ।
करेगी क्या

अकेली बेचारी,
नही है उसकी
यूनियन कोई ।

श्रमिक

शाम को
गगा के किनारे
शिला-खण्ड पर
निश्चिन्त बैठे
डूबे हो तुम
खयालो की
रगीनियो मे ।
सोचो जरा
वह श्रमिक
क्या सोचता होगा
जो नाव मे लदी बालू को
ढो-ढोकर
किनारे
जमा कर रहा है ।

सरल सुख

बैठा था बाहर
बिल्कुल निश्चिन्त
देखता चीजे
सुनता आवाजे
विना चुनाव के

विना तनाव के ।
पल थे वे
तन्मयता के,
सहजता के,
पसरे सुख के ।
मिला था यह सुख
विना मोल के,
विना यत्न के ।

मजदूर की अनुभूति

मजदूर
सुबह से
कर रहा था
कठिन श्रम
खेत मे
धूप मे ।

दोपहर से पहले,
आया मालिक
लेकर उसका जलपान ।

मजदूर ने
बैठकर
नीम की
ठण्डी छॉव मे
धीरे-धीरे खायी
गुड की भेली,
फिर पिया तानकर
कुएँ का

लोटा भर
ठण्डा पानी ।

उसने जाना–
मीठे गुड का स्वाद,
ठण्डे पानी का स्वाद,
शीतल छॉव का सुख,
और, होता क्या विश्राम ।

कर्त्तव्य-निर्वाह

मई की थी
झुलसाती दोपहर ।
बह रही थी हवा
आग की लपटे बनकर ।
ऊपर से
उड रही थी धूल ।
तभी जा रहा था
एक आदमी
अपनी ड्यूटी पर
झेलते ये तकलीफे ।
मगर उसका सीना था
तना हुआ,
सिर था
ऊँचा उठा हुआ,
चेहरे पर थी
छायी दृढता,
और,
कर्त्तव्य-निर्वाह के पखे से

डुल रही थी उसके लिए
ठण्डी हवा।

बेचारी बकरियाँ

कसाई की दूकान मे
उल्टा लटकी थी
जिबह की बकरी।
उसकी खाल
ली गयी थी खीच।
बगल मे थी बॅधी
तीन बकरियॉ।
खडी थी वे
सहमी, चुपचाप,
कभी देखती इधर
कभी उधर,
लेकिन
न देखती कभी
उल्टी बकरी को।
उन बॅधी बकरियो के दिमाग मे
क्या था ?
ओह, क्या था ?

पास से लोग
गुजर रहे थे।
कुछ ऐसे, जैसे
यह तो
जग की रीति,
यह तो
होता ही रहता है।
कुछ, देखकर उधर

झट फिरा लिये
अपना मुँह ।
कुछ का मन
हुआ खराब
उल्टी बकरी से,
मौत की कतार मे खडी
बकरियो से ।
पर वे भी
नही कर सके कुछ
बकरियो के हित मे ।
उनका दु ख
उनका आक्रोश
रहा निकम्मा ही ।

मन का खत

वह खत
आखिर है
कागज ही तो ।
लेकिन उसमे
लिखा है कुछ
तुम्हारे मन का,
इसलिए
चीथकर
नही फेकोगे
तुम उस खत को
कूडेदान मे,
बल्कि
सहेजकर रक्खोगे
उसे अपने बक्से मे ।

महबूबा

कहते है –
महबूबा
बने न
घरवाली,
नही तो
मोहब्बत
मर जाती है ।
लेकिन,
महबूबा
बने न
घरवाली,
तो जिन्दगी
मर जाती है ।

राशि-फल

था मन
दु खी, अशान्त ।
पढते अखबार
आया मन मे
देखे आज का राशि-फल ।
राशि-फल मे दी थी
इक मीठी बात–
होगा मित्र-समागम ।
दु ख-निमग्न मन-पट पर
खिची एक
आशा की रेख,

बावजूद इसके कि
बार-बार
निकले झूठे
राशि-फल ।

डॉट

पिता ने कहा
बेटे से–
डॉटा तुमको
हुए नाराज,
फिर आये नही पास
प्यार से
पुकारने पर भी,
मनाना पडा तुम्हे ।
लेकिन,
अपनी बिल्ली को डॉटा
तो भाग गयी,
पुकारा फिर
प्यार से
तो हिचककर कुछ
पास आ गयी ।

तरबूज का टुकडा

लडके ने मोल लिया
तरबूज का टुकडा ।
खाया उसका हिस्सा

लाल-लाल
बड़े चाव से,
बाकी फेक दिया।
पास खड़ी
फटेहाल लड़की ने
कुछ सकुचाकर
उठा लिया
वह टुकड़ा,
और, पोछ-पॉछकर
लगी खाने
कुछ ललछौहॉ
बाकी सफेद
तरबूज।
देख यह दृश्य
लडका
घिन से घिर आया
अचरज से भर आया,
लेकिन दिल मे उसके
उपजी नही करुणा।

लेकिन

दूर शहर से
बेटा आया
अपने घर
दो दिन को।
बेटे को
दुर्बल देख
मॉ का दिल रोया।

माँ ने चाहा,
खिला दूँ
क्या-क्या
बना-बनाकर
बेटे को अपने
इन दो दिन मे ।
लेकिन बेटे की
नही थी रुचि
खाने मे खास ।

मै हूँ

कही से
मन मे उपजा अहसास
कि हूँ मै,
भले ही
बडी छोटी दुनिया मे,
कर देता है
मन को खुश,
क्योकि
होती है इससे
अहम् की तुष्टि ।
मगर
खुशी यह मिटती,
जैसे, केले के
हिलते पत्ते पर
चमकती बूँद
फिसलकर मिटती ।

घरवाली

जब तुम
हो जाती दूर,
आती याद तुम्हारी,
लगता तुम
प्रिय हो मुझको,
खलता एकाकीपन,
और होती तकलीफ
असुविधाओ के कारण ।
लेकिन
जब तुम
रहती साथ,
तब कभी ही
आती याद तुम्हारी,
कम ही लगता
प्रिय हो मुझको,
खलता एकाकीपन
तुम्हारे रहते भी,
और कम ही जाता ध्यान
सुविधाओ की ओर
देती जो तुम ।

सावन मे

सावन मे
गॉव के बाहर
चराता ढोर
देखता बालक कभी

मेघो के हाव-भाव
जैसे हो
नर्तकी के हाव-भाव,
कभी देखता
खेत, घास और पेड
सब के सब
एकदम हरे
जीवन भरे
बने हुए
नयन-रसायन,
कभी देखता
चमकती धूप,
और कभी
मटकती छाया
मानो फेके जाते हो
पॉसे ।

माँ की पीड़ा

पहली बार
घर से बाहर
जब मै निकला
मुझे नही हो पाया सम्यक् एहसास
अपनी मॉ की पीड़ा का ।
लेकिन,
पहली बार
घर से बाहर
जब निकला मेरा बेटा
तब हो पाया सम्यक् एहसास
मुझे अपनी मॉ की पीडा का ।

मेरी बात

मैने
जो बात
कही है
है वो
असल मे
वही
जो कइयो ने
कही हैं,
फिर भी,
मेरी बात
पुरानी नही
चुरायी नही,
है यह
मेरी बात,
क्योंकि
मैने
इसे अनुभव किया है ।

शब्द-सम्मोहन

शब्दो का
चयन उनका,
कथन का
ढग उनका,
कर गया
सम्मोहित मुझे ।
पर जब वहाँ से

उठकरके आया,
तब बिचारा
सजगता मे
कथ्य उनका,
तब पता
मुझको चला
कैसा विमूढ
था मै हुआ ।

अकेलापन

सुख मे
अकेलेपन का अनुभव
उतना
नही करते हम
जितना
दु ख मे,
क्योकि
सुख मे
बाहर-भीतर
हम जाते पसर
जबकि
दु ख मे
बाहर-भीतर
हम जाते सिमट ।

प्रभु

मै नही जानता
तुझको,

मै नही समझता
तुझको,
और मै
सुना-पढा करता हूँ
बहुत-सी बाते
तेरे खिलाफ,
खुद भी
सोचता रहता हूँ
विरोधी बाते,
फिर भी,
जब भी होता हूँ
बिलकुल असहाय
किसी भी कारण,
जुडते है मेरे हाथ
तेरे प्रति प्रभु ।

कलमे

बचपन मे
दूर गाँव से
नरकुल लाता था ।
उन्हे छील-छालकर
सुन्दर कलमे
बनाता था ।
अब बाजार से
खरीद लाता हूँ
बनी-बनायी
उनसे सुन्दर
कलमे ।

लेकिन,
कहाँ
वह उछाह ।
वह उल्लास ।।

दम्भ

जानते जो
ॲगरेजी कम
उनके बीच
बीच-बीच मे
बोलते वे ॲगरेजी
जमाने को
अपनी धाक,
और
जानते जो
ॲगरेजी ज्यादा
उनके बीच
बोलते वे हिन्दी
देते तसल्ली
अपने को
कि हिन्दी है
अपनी जबान ।

प्रेम

जीवन के
विशेष दौर मे

मैने
कितना चाहा
कितना चाहा
कि वह जिये
सिर्फ मेरे लिए
मै ही
होऊँ
और रहूँ
उसका सब कुछ
मुझमे ही
हो लय
उसकी खुदी ।

प्रतीक्षा

बेताबी से
कर रहा हूँ
मै प्रतीक्षा
अखबारवाले की,
देखने को अखबार
छपनी है जिसमे
आज मेरी रचना ।
प्रतीक्षा के दौरान
हो रही मन मे
कितनी उठा-पटक
रचना के
छपने के
बारे मे ।

क्यो कर रहे ?

बेटे से नाराज होकर
बिस्तर पर पडे हो ।
सोचते हो क्रोध मे–
कल सुबह
इसे जगाये या नही
स्कूल जाने के लिए ।
क्यो कर रहे
अपना माथा खराब
पड़कर इस उधेडबुन मे ?
कल सुबह
सोकर जब उठोगे
तुमको मिलेगा
इसका फैसला ।

निष्फल हुई आस

इस कदर
इक आस
बसी थी
मन मे
कि रात मे देखे
उसके सपने
और खराब
हुई नीद भी ।
पर हाय सुबह
निष्फल
हुई आस
घायल कर मन ।

काम मे मजा

बरामदे मे बैठे
अपने जूतो मे
पालिश करते
वे ले रहे मजा
हवा के हलके
झोको का,
गिलहरी की
धमा-चौकडी का,
नीले आसमान की
सुषमा का,
अशोक की छाया की बगल मे
पडती चमचमाती धूप का,
और बॉहो की
कसरत का ।

इस तरह उघरे

तुम खडे
हाथ जोडे
मूर्ति के आगे ।
आ रहे
तुम्हारे मन मे
विरोधी विचार ।
घबराओ नही,
आने दो उन्हे
बिल्कुल निर्बन्ध,
विकसने दो उन्हे

एकदम स्वच्छन्द ।
क्या पता
इस तरह उघरे
दबी
मन की परते ।

भिखमगी

भूखी भिखमगी
नगी धरती पर
पडी हुई थी ।
उसका पेट
अन्दर इतना
धँसा हुआ था
कि लगता था
पेट-पीठ दोनो
एक हो गये ।
उसको पकडे
उसकी नन्ही
नगी बच्ची
चीख रही थी,
और वह
भूख से
बिल्कुल अशक्त
बस थोड़ा
सिर उठाकर
देखती बच्ची को
और फिर
रख देती

अपना सिर
कठोर धरती पर ।

उसकी जानलेवा भूख पर
आयी मुझे दया,
दु खी भी हुआ,
सोचा और विचारा,
लिख भी डाला,
दूसरो से
चर्चा भी की,
पर उसके लिए
किया क्या ।

पण्डित जी

पण्डित जी आये
यजमान के घर
करने देवी-पाठ ।
आते ही
माँगा पानी
पीने को,
फिर रुककर
पाठ के बीच
माँगी चाय,
फिर पूराकर पाठ
चलने के पूर्व
किया फलाहार
पिया दूध ।

पते की बात

करने जा रहे थे
वे कोई काम
जो लग रहा था
उनको बोझ ।
तभी पत्नी ने
दिया एक तर्क
रोकने को काम
कुछ दिन और ।
सुनकर तर्क
कुलक गये वे,
और बोले–
बात तुमने
कही पते की ।

भक्ति-भावना

आश्विन के
नवरात्र मे
पूजन-अर्चन उपरान्त
हुई विसर्जित
गगा मे
सुन्दर प्रतिमाये
दुर्गा की ।
गगा-जल मे
शीघ्र गले
प्रतिमाओ के
बाहरी सुरूप,

और निकले
ढाँचे भीतरी कुरूप ।
इन्हे देख,
झटक गयी
भक्ति-भावना ।

परम ज्ञान

परम ज्ञान के
प्रकट होने पर
वस्तुये
तिरोहित नही होती ,
बल्कि
नयी दृष्टि से
अनुभूत होती,
उनके
अर्थ बदलते,
प्रज्ञानी के
मन की
उनके प्रति
वृत्ति बदलती ।

इन्तजार

सात दिनो मे
उनके मन मे
आयी अनगिन बाते ।
इन बातो मे

कुछ थी दु ख की
कुछ थी सुख की,
लेकिन बाते सुख की
बहुत ही कम थी ।
सुख की कतिपय बातो मे
थी एक बात
सुखकर विशेष
जिसके घटने की
पल रही थी आशा
उनके मन मे ।
सात दिनो के आखिर मे
घटने वाली थी
वह बात विशेष ।
पूरे सात दिनो तक
रही बराबर दोहराती
अपने को वह बात
तरह-तरह से
उनके मन मे ।
जिस दिन था
अन्त अवधि का,
करते इन्तजार
बात के घटने का
वे लगे सोचने–
खोये मन ने
कितने पल
कितने पल
बात सुमिरते ।

वे बहुत थे

साल से ज्यादा हुआ,
तुमसे तब मिले हम ।
फिर भी
बात दिल की
कोई हो न पायी,
था माहौल ही ऐसा ।
किन्तु जब हम चले,
छोडने आयी तुम
नीचे तलक ।
बस तभी
कह पाये
शब्द् दो
हम-तुम ।
वे बहुत थे ।

क्या लगता ?

बिल्कुल साधारण
कुर्ता-पाजामा पहने
बढाये दाढी
मै घूम रहा था
देहात तरफ ।
मिला मुझे
देहाती एक
अपरिचित ।
उसने किया
नमस्ते मुझको

फैलाकर हल्की मुस्कान
अपने चेहरे पर दीन ।
दिया प्रतिदान
उसे मैने,
फिर झट
अपने को देखा
सोचते–
क्या लगता
मै बडा आदमी ?

न जाने क्या था

थी वह
अनजान लडकी
करीब बारह साल की ।
उससे
मैने पूछा
पता इक जगह का ।
उसने बताया ।
लेकिन,
उसमे
और उसकी आवाज मे
न जाने क्या था
कि उससे
ऑख मिलाने मे
मै डर गया,
भीतर तक
हिल गया ।

माँ

माँ रहती
जब दूर
तब उसकी याद
बहुत आती,
बहुत प्रिय लगती,
कभी-कभी
आँखो मे आ जाते आँसू
उसकी खातिर,
कभी-कभी
मन-ही-मन मुस्काते
उसकी खातिर,
कभी-कभी
फूलता सीना
उससे मिले
प्यार के कारण,
कभी-कभी
सन्तोष-सरोवर मे
लगाते डुबकी
सोचकर उसका
अतिशय प्यार।
लेकिन रहती
जब वह पास,
क्यो सब कुछ
घट जाता कुछ ?

वह भी फटी हुई

तुम पहने नीचे
सूती बनियाइन,
उसके ऊपर
फुल स्वेटर,
उसके ऊपर
खद्दर का कुर्ता,
उसके ऊपर
फिर स्वेटर ।

वह पहने नीचे
सूती बनियाइन,
उसके ऊपर
केवल कमीज
वह भी फटी हुई ।

यूँ छापी थी

व्यवसायिक पत्रिका मे
सचित्र पृष्ठ पर
काले हिस्से मे
कुछ सफेद
कुछ लाल
अक्षरो मे
छपी थी यूँ
इक कविता
कि हुई दिक्कत
उसे पढने मे ।

मैने दी छोड़ कविता
खाते तरस
उस बेअक्ल के
सौन्दर्य-बोध पर
जिसने यूँ छापी थी
वह कविता ।

क्या होते न अप्रसन्न ?

छोटा-सा काम
न कर सके तुम
अपने मित्र का ।
जब वे मिले
तो तुमको लगा
अन्दर से
अप्रसन्न है वे ।
यह लगा
तुमको बुरा ।
लेकिन,
यदि होते तुम
उनकी जगह,
तो क्या
होते न
अप्रसन्न ?

धर्म

धर्म अधिकतर
जुड़ा हुआ है

हमारे डर से
हमारी कमजोरी से
क्योकि
हम ज्यो-ज्यो
बुढाते जाते है
आम तौर पर
धर्म की ओर
त्यो-त्यो
झुकते जाते है
क्योकि
हम कमजोर
होते जाते है
और हमारा डर
पास आती मौत का
बढता जाता है ।

स्मृति-अनुभव

दूर देख
दृश्य एक
कुछ अनुभूत हुआ
कुछ आया याद
सौन्दर्य रहस्यमय
जिसकी अनुभूति
हुई थी कभी
देख दृश्य
ऐसा ही ।
इस किंचित
स्मृति-अनुभव के
मिलने से
मुँह से निकली
बरबस आह ।

मृत्यु का भय

डरो नही,
खुलकर सोचो
जब भी आये
तुम्हारे मन मे
विचार, भाव
मृत्यु का ।
डरो नही,
खुलकर बात करो
जब भी आये प्रसग
अपनी ही
मृत्यु का ।
इस तरह होगा कम
तुम्हारा भय
मृत्यु का ।

आशा-निराशा

मन के आँगन मे
फैला था अन्धकार
निराशा का ।
इस अन्धकार को
सह न सका मन
अधिक देर ।
जलाया उसने
एक दीप आशा का,
जिससे आँगन मे
हुआ कुछ प्रकाश ।

परन्तु शीघ्र ही
मन के एक
ऋणात्मक विचार के झोके से
बुझ गया दीप
और फिर
पसरा अँधियारा ।
मन-ऑगन मे
रुकने वाले अन्धकार
व भगने वाले फीके उजास
का लगा रहा
आना-जाना ।

अपूर्ण वचन

दिया था वचन
उनको
न जाने
कितनी बार–
करूँगा मै
तुम्हारा काम ।
मगर किया नही
उनका काम
अभी तक ।
परिणामस्वरूप,
सालता रहता है
अपराध-बोध
मेरे मन को,
जिससे मुक्ति को
रहता हूँ बेचैन ।

क्या रम पायेगा ?

कर रहे है वे
स्वादिष्ट भोजन,
लगा है
खाने मे मन,
पर, नही पूरा ।
सोच रहे है वे–
भोजन करके
बैठूँगा बाहर
गुनगुनी धूप मे,
काटूँगा सुपाडी,
फिर मिलाकर लौग इलायची
खाऊँगा,
चुभलाऊँगा ।
मगर,
क्या रम पायेगा
उनका मन
इस सब मे ?

काँपती रोशनी

उसको उम्मीद थी
वे होगे वहाँ ।
जब उन्होने
बरामदे मे
आवाजे सुनी,
कक्षा की
खिड़की मे से

घबराते
उधर देखा ।
किसी अपनी परिचिता के सग
आती दिखी वो,
उसी से
हॅसते, बतलाते ।
और तभी
उन्होने देखा,
लचक गयी वो ।
फिर क्या,
उनके दिल की गुफा मे
कौध गयी
कॉपती रोशनी ।

पहली जनवरी

कल है पहली जनवरी ।
सोचते है लोग–
कल आयेगा बदलाव,
बदलाव कल से
होगा शुरू ।
पर कुछ ही दिनो मे
हो जायेगा फिस
यह सोचना,
और उमगेगा
वही बीता एहसास–
सब दिन है बराबर ।
दो-चार दिन
जो सोचा था

बदलाव के सम्बन्ध मे,
वह थी
लोगो की अमिट प्यास
बदलाव की ।

ग्रीटिगकार्ड

नये साल पर
पिछले साल
जिन्हे उन्होने
भेजे थे ग्रीटिगकार्ड,
उन्हे भेजने को ग्रीटिगकार्ड
नही सोचा तक
इस साल ।
बस आया ख्याल
भेजे थे परसाल ।

क्यो सोचे,
उनसे उनका अब
क्या मतलब ।

वादा

जब भी खोलता हूँ
अपनी अलमारी
याद आते हैं
इसमे बन्द
तुम्हारे नोट्स,
और मै

अपराध-बोध से
हो जाता हूँ ग्रस्त
क्योकि
मुझे याद आता है
तुमको बार-बार दिया
अपना वादा
जिसे
मै नही कर रहा पूरा ।

सुनहरा मौका

मै
अपनी तरफ से
कुछ नही
पूछ सकता,
हालॉकि
चाहता हूँ पूछना ।
वह
अपनी तरफ से
चाहते भी
कुछ नही
पूछ सकती,
यह
मै जानता हूँ ।
इस तरह
बीत जायेगा
आज का
सुनहरा मौका,
यह
मै जानता हूँ ।

रे मजदूर ।

रे मजदूर ।
सरदी की
शाम हो रही,
लेकिन तुम
पहने मैली कमीज
और लुगी फटी
घण्टो से
बस एक ही काम
कर रहे–
झौवे मे
ईटे भरना
और उन्हे
राजगीर तक
सिर पर ढोना ।

गीजर

गीजर से
गरमाये जल से
नहाते तुम
सरदी मे
बडे मजे मे ।
लेकिन,
क्या इससे
कम नही हुई
तुम्हारे शरीर की
सहन-शक्ति ?

रे मजदूर ।

रे मजदूर ।
सरदी की
शाम हो रही,
लेकिन तुम
पहने मैली कमीज
और लुगी फटी
घण्टो से
बस एक ही काम
कर रहे–
झौवे मे
ईटे भरना
और उन्हे
राजगीर तक
सिर पर ढोना ।

गीजर

गीजर से
गरमाये जल से
नहाते तुम
सरदी मे
बड़े मजे मे ।
लेकिन,
क्या इससे
कम नही हुई
तुम्हारे शरीर की
सहन-शक्ति ?

क्या बढी नही
तुम्हारी
मशीन पर निर्भरता ?

गॉव और शहर

गॉव से आकर
बसे शहर मे ।
अब
जब जाते गॉव,
अच्छा लगता
उन्हे वहॉ,
लेकिन बस दो दिन,
फिर घबराकर
भग आते शहर ।
शहर मे रहते,
फिर ऊबने लगते,
घबराने लगते,
तब फिर
करने लगते याद
अपना गॉव ।

तुम्हारा हक

भोगी है तुमने
जो अनुभूति,
हुई है वह
तुम्हारा सच ।

इससे
बनता है तुम्हारा हक
उसे व्यक्त करने का ।
छिनता नही
तुम्हारा हक
उसे व्यक्त करने का
इस कारण कि
किसी और ने
उसको भोगा है
और व्यक्त किया है ।

होगा क्या कभी अन्त ।

नही है
जो-जो
तुम्हारे पास,
सोच-सोच
उस-उसको
दु खी होते हो तुम ।
न जाने क्या-क्या
नही है
तुम्हारे पास,
तो फिर,
तुम्हारे दु ख का
क्या होगा
कभी अन्त ।
इसलिए,
जो-जो है
तुम्हारे पास,
उस-उसका
भोगो तुम सुख ।

मैत्री और उसूल

हम तुम मिलकर
बनाये है
मैत्री का सम्बन्ध ।
यह सम्बन्ध
बिगड सकता है ।
तुम हमसे
कुछ करने को
कह सकते हो
जो हो खिलाफ
हमारे उसूल के ।
अगर
तुम्हारी खातिर
उसे हम
नोडते है
तो हमारा उसूल
टूटता है
और इससे टूटेगी
हमारी अस्मिता ।
और अगर
हम नही तोडते
अपना उसूल
तो हमारा तुमसे सम्बन्ध
बिगड सकता है,
नही भी ।
अगर नही बिगडता
तो बात बडी अच्छी है ।
अगर बिगड़ता है
तो बात तो अच्छी नही है,

फिर भी
बहुत बुरी भी नही है,
क्योकि
हमारी अस्मिता तो बनी रहेगी ।
अस्मिता ही तो
हमारा अस्तित्व है,
हमारी पहचान है,
हमारी निजता है ।
इसी मे तो हम
पाते है अपने अस्तित्व की
सार्थकता ।

परदा फटने लगा

सालो पूजता रहा
कॉकर-पाथर ।
एक दिन
उन्हे
देखने लगा,
देखते
डरता रहा,
फिर भी
देखता रहा,
फिर डर
हटने लगा,
अरे !
अज्ञान का परदा
फटने लगा ।

वो लडकी

छोटी-सी लडकी
सॉवले रग की
धूल-धूसरित
दुबली-पतली
पर जीवन्त ।
पहने थी मैली
नीली नेकर,
बनियाइन थी
सूती, फटी हुई ।
रही थी बटोर
सूखी डण्डी से
सूखे पत्ते
बौराई अमराई मे
सॉझ ढले ।

तमाचा

किसी दिन
थोडी मेहनत
क्या कर ली
कि फुला लिया सीना
सोचकर
कि हूँ मेहनती ।

कभी किया है गौर
मेरी मेहनत पर–
रोज-ब-रोज

मेरे द्वार तरु नीम का

सुबह से शाम
ढोता हूँ
अपने सर पर
ईंटे, ईंटे, ईंटे ।

इच्छा

इच्छाओ के मरने से
होगे खुश,
सोचते हम ।
लेकिन,
जब मरती कोई इच्छा,
उभरती तत्काल
दूसरी इच्छा,
और खुशी के भूखे
बने ही रहते हम,
इच्छाओ के मरने से
खुश होने के भ्रम मे
जीते ही रहते हम ।

पुष्प-प्रदर्शनी

हम कारखाने मे
सुबह से शाम तक
रोज करते हैं काम ।
आज है अवकाश,
क्योकि है रविवार ।
आज का रविवार

है हमारे लिए खास,
क्याकि मिली है हमे
देखने को कारखाने की
फूलो की प्रदर्शनी ।
घूम-घूमकर
देख रहे है हम
फूलो की प्रदर्शनी ।
आज के अवकाश के
इस खण्ड का
एक-एक क्षण
जी रहे हैं हम,
हमे पता ही नही
बीतते क्षणो का ।
ये तो उड रहे हैं,
क्योकि हमी उड रहे है
बेशुमार, खूबसूरत
फूलो की दुनिया मे ।

दो मनोदशायें

चढती उम्र मे
यह विचार
कि खास नही
कर रहा कुछ,
नही सालता था अधिक,
क्योकि,
लगता था
अभी शेष है
बहुत जिन्दगी ।

मेरे द्वार तरु नीम का

ढलती उम्र मे
यह विचार
कि खास नही
कर पाया कुछ,
सालता है बहुत अधिक,
क्योकि,
लगता है
नही है शेष
अधिक जिन्दगी ।

पेट

दिन भर
खेत मे खटता
बोला मजदूर–
बाबू जी ।
जब पेट भरा होता है
तब सब अच्छा लगता है ।

यह बात
एक दिन
कही सेठ से मैने
गद्दी पर बैठे-बैठे
जो ऊब रहे थे ।

सेठ जी बोले–
मै नही मानता,
मेरा तो पेट भरा है
फिर भी
नही कुछ अच्छा लगता ।

अब कौन
उन्हे समझाये,
होती है क्या
कीमत रोटी की,
होती है क्या
आग भूख की ।

तरकारी

तरकारी के लिए
खेत तैयार करते
मजदूर ने कहा–
हमको तो
तरकारी तभी मिलेगी
जब हम
करेगे इसे पैदा
खेत मे ।

आहत हम
लगे सोचने,
हमे तो
मिल जाती है तरकारी
पैसे से
घर बैठे ।
आगे और
लगे सोचने,
चुगीवाले को तो
मिल जाती है तरकारी
मुफ्त मे ।

मेरे द्वार तरु नीम का

प्यारा पत्र

प्यारा पत्र मिला ।
पढा उसे अनेक बार,
फिर भी भरा न जी ।
उसे पढ़ूँगा बार-बार,
सन्निहित खुशी जो उसमे ।
जिस दिन पत्र मिला,
मै रहा झूमता
नशे मे उसके ।

रखा उसे
बक्से मे सँभालकर ।
निकालता उसे
बक्से से सँभालकर ।
देखता उसे
खोलकर धीरे से
बहुत खुश होकर ।

रखूँगा उसे
हरदम सँभालकर,
नही वो जो
कागज का टुकड़ा,
है वो जो
सोने का टुकड़ा ।

बपौती नही है

अनुभूति को
एक ही

उन्होने कहा है
हमने कहा है।
सत्य को
एक ही
उन्होने कहा है
हमने कहा है।
किसी ने
किसी की
चोरी नही की।
अनुभूति
एक ही
हो सकती
कई की।
सत्य
एक ही
हो सकता
कई का।
ये
किसी एक की
बपौती नही हैं।

अन्तर्द्वन्द्व

कुछ देर तक
उनसे आप
बाते करते रहे
चाव से,
फिर लगे चाहने
बाते हो खत्म

और जाये वे,
पर आप
नही कह पा रहे थे यह,
अन्दर-ही-अन्दर
खीझ रहे थे,
तनाव से
बिधे जा रहे थे।
ये भाव
दबाने पर भी
आपके चेहरे पर
व आवाज मे
कुछ-न-कुछ तो
उभर ही रहे थे,
उनकी अनचाही
उपस्थिति का भार
आप ढो रहे थे,
फिर भी,
जाने को, उनको
नही कह पा रहे थे।

आखिर
जब गये वे
तो आप
अपने पर
उन पर
नाराज थे,
थक गये थे आप,
सर आपका
कर रहा था दर्द,
था बड़ा क्षोभ आपको
अपनी कमजोरी पर
जो चाहकर भी

न कह पाये उनसे
जाने को ।

पत्र-पत्रिकाये

वर्षों से
पत्र-पत्रिकाये
सहेजते जा रहे है वे ।

अकेले हैं वे,
नही है
लेखक भी वे ।
इकट्ठा कर-कर
कितना फिर
पढ सकेगे वे ?
या फिर,
किसके लिए
इकट्ठा कर रहे है वे ?

क्यो पत्र-पत्रिकाये
करते जा रहे हैं इकट्ठा ?

लगता है,
अन्तस उनका
है बडा दरिद्र ।
मन अवचेतन उनका
अनजाने मे
सहेजकर पत्र-पत्रिकाये
अन्दर से सम्पन्न
होने की कोशिश मे
लगा है लगातार ।

काम को चीजे

अस्पताल के किनारे
जमा गन्दे कचरे मे
पड़े थे छिलके
सन्तरो के,
पड़ी थी खाली
बोतले, शीशियॉ,
पड़े थे फाहे
रूई के, गन्दे,
और भी चीजे
पड़ी थी वहॉ।

ये सारी चीजे
फेकी गयी थी
बेकार समझकर।

उसी बेकार, भिनकते कचरे मे
ढूँढ रही थी दो औरते
काम की चीजे।

आदिम दृश्य

बात है बचपन की।
दो-तीन दिनो तक
बारिश बहुत हुई थी।
मेरे गॉव के बाहर
कुछ दूरी पर
था मेरा
आमो का एक बाग।

एक दिवस,
जबकि बारिश थमी हुई थी,
दोपहर ढली हुई थी,
आसमान था साफ, धुला,
तभी मैं गया
अपने बाग
आमो के चक्कर मे ।

वहाँ पहुँचकर,
देखा अमराई खडी थी
नये सरोवर के बीच ।

यह सुखद आदिम दृश्य
रहस्य-रोमाच भरा
न भूल पाया मै
अब तक ।

झूठा दिलासा

तुम सोचते हो–
आज रामनवमी है
आज मिलेगा पोस्टमैन से
कोई-न-कोई सुखद पत्र ।

लेकिन,
यह
केवल झूठा दिलासा है ।
सुखद पत्र
दिनो की शुभता के कारण
नही आया करते ।

ऐसे दिनो को
ऐसा हम सोचते है
अपनी ही इच्छाओ की
उत्कटता के कारण,
अपनी ही
कमजोरी के कारण,
अपनी ही
मूढ़ता के कारण ।

मन को मथने लगा

आया विचार
मन मे,
कुछ रुककर
गुजर गया ।

आया विचार
मन मे
और हम
करने लगे
टीका-टिप्पणी
उस पर,
फिर क्या,
रुक गया विचार,
मन को मथने लगा ।



मेरे द्वार तरु नीम का

कवि-परिचय

नाम [illegible] पाठी

जन्म १ दिसम्बर १९४२

शिक्षा एम ए , पीएच डी

प्रकाशन [illegible] Reasoning And Common Sense
मन के [illegible])
अनुभूति-कलश (हाइकू-सकलन)
उपर्युक्त पुस्तको के अतिरिक्त, विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे लेख,
कविताएँ और लघुकथाएँ प्रकाशित ।

सम्प्रति आचार्य एवम् अध्यक्ष
[illegible]
महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ
[illegible]-२

सम्पर्क ५, नन्द नगर
बी एच यू
[illegible]